भारत एवं राजस्थान सरकार द्वारा विज्ञापनों के लिए मान्यता प्राप्त

आरएनआई पंजीयन RAJHIN/2016/72902

डाक पंजीयन RJ/ UD/ 29-150/ 2023-2025

शब्द रंजन

संस्थापक एवं संरक्षक डॉ. महेन्द्र भानावत

विचार एवं जनसंवाद का पाक्षिक

वर्ष 9 | अंक 06 | उदयपुर सोमवार 01 अप्रेल 2024 | पेज 8 | मूल्य 5 रू.

होली के बाद कथा-कहानियों का जोर

– डॉ. महेन्द्र भानावत–

राधा अष्टमी, ऊंकार्‌या आठम के दिन कवेलू पर मिट्‌टी की कूकड़ माकड़ बना पूजा करते हैं। कूकड़ माकड़ के रूप में कूकड़ के 5 अण्डे तथा माकड़ के 108 अण्डे बनाते हैं। महिलाएं आठ वर्ष तक इस दिन व्रत करती हैं और उसकी उझमणी यानी समाप्ति पर आठ जोड़े, पति-पत्नी को भोजन कराती हैं। प्रत्येक जोड़े को जीमाने के उपरान्त चांदी का कान में पहनने का आभूषण, ऊंकार्‌या तथा कापड़ा देती हैं। व्रतार्थी महिला के लिए इस दिन उसका भाई सोने का बना ऊंकार्‌या लाकर पहनाता है। यह आजीवन पहना रहता है बल्कि मृत्यु के बाद भी नहीं खोला जाता है।

होली से लेकर गणगौर तक का समय विविध धर्मानुष्ठान का है। इन दिनों महिलाएं संयमित जीवन जीते हुए अपना पूरा समय धर्ममय कर्म में गुजारती हैं। व्रत करके कथा कहती हैं और पूरे अनुष्ठान से उनका समापन करती हैं। यह सब करने के पीछे उनका सौभाग्यवती बने रहकर पारिवारिक सुख-सम्पदा की वृद्धि तथा मंगल मांगल्य बना रहने की भावना ही प्रमुख रहती है। दशामाता की कहानियों पर कई वर्ष पूर्व मेरी आत्मजा डॉ. कविता मेहता ने पीएच.डी. प्राप्त की थी। उसकी पुस्तक 'राजस्थान की लोक व्रत संस्कृति' नाम से प्रकाशित हुई।

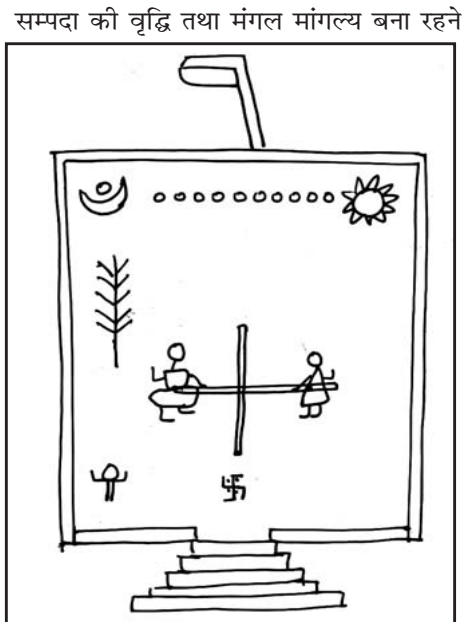

दशामाता का थापा

उदयपुर के राजमहल की मुख्य सडक पर जगदीश मंदिर के आगे बद्दू भगतण का दरवाजा प्रसिद्ध है। इससे प्रवेश करने पर भीतर पूरी बस्ती बसी हुई है। 14 अप्रेल 1976 को यहां निवास कर रही अम्बाबाई गुजरगौड़ (80) से उनके निवास पर भेंट की। यहीं नाव घाट पर रह रही गायिका नारायणीबाई ने उनसे भेंट कराई। अम्बाबाई बड़ी जानकार और आस्थावान महिला थीं। कहानियों का पूरा भंडार थीं। उनके मकान में विविध थापे भी दीवालों पर बने देखे। उनका पूजा विधान तथा कहानी कथन महिलाओं की जीवनधर्मिता का आवश्यक अंग था जिसके पीछे उनके सौभाग्यवती बने रहने तथा परिवार में खुशहाली और आनंद ठाठ रहने का प्रबल भाव था।

अम्बाबाई ने बताया कि भादवासुदी आठम, राधा अष्टमी को ऊंकार्‌या आठम के नाम से भी जाना जाता है। इस दिन कवेलू पर मिट्‌टी की कूकड़ माकड़ बना पूजा करते हैं। कूकड़ माकड़ के रूप में कूकड़ के 5 अण्डे तथा माकड़ के 108 अण्डे बनाते हैं। महिलाएं आठ वर्ष तक इस दिन व्रत करती हैं और उसकी उझमणी यानी समाप्ति पर आठ जोड़े, पति-पत्नी को भोजन कराती हैं। प्रत्येक जोड़े को जीमाने के उपरान्त चांदी का कान में पहनने का आभूषण, ऊंकार्‌या तथा कापड़ा देती हैं। व्रतार्थी महिला के लिए इस दिन उसका भाई सोने का बना ऊंकार्‌या लाकर पहनाता है। यह आजीवन पहना रहता है बल्कि मृत्यु के बाद भी नहीं खोला जाता है। इस समय कूकड़ माकड़ की कहानी कही जाती है। अम्बाबाई ने यह कहानी सुनाई–

कूकड़ माकड़ दोनों बहिनें थीं। दोनों साथ रहतीं। एक दिन डूंगर पर दावाग्नि से कूकड़ अपने बच्चे को छोड़ उड़ गई। दावाग्नि में माकड़ भस्म हो गई। दोनों बहिनों ने अगला जन्म ब्राह्मण के घर लिया। ब्राह्मण ने एक को अपनी जाति में तथा दूसरी को राजा के घर विवाह दी। ब्राह्मण के वहां विवाहिता के पांच संतानें हुईं पर राजा के वहां वाली के कोई संतान जीवित नहीं रहती। इस पर उसने अपनी बहिन पर शक किया कि उसी ने कोई कामण-टोटका कराया होगा। उसने राजा से कहा कि वे अपनी बहिन के पांचों लड़कों की हत्या करा उनके मुंड मंगवायें अन्यथा गोखड़े से कूदकर वह अपने प्राण त्याग देगी।

राजा ने डावड़ी के साथ जहर के लड्डू भेजे पर बालकों पर कोई असर नहीं पड़ा। सांप गोइरे भेजे जिनसे बच्चे खेलने लगे। इस पर राजा उन्हें शिकार पर ले गया जहां उनके मुंड काट लाया। रानी ने उन्हें घर में टोकरे के नीचे छिपा दिये। उधर शिव-पार्वती जोगी तथा बिल्ली बन निकले। जोगी भीख मांगने लगा, कहा कि भीख दो नहीं तो श्राप दूंगा। रानी डरी। उधर बिल्ली रूप पार्वती टोकरे से बच्चों के मुंड निकाल लाई। उन पर अमृत का छींटा दिया जिससे वे जीवित हो उठे। रानी ने टोकरा ऊंचाया पर कुछ नहीं मिला।

उन्हीं दिनों रानी के लड़की हुई पर तत्काल मृत्यु को प्राप्त हुई। रानी ने सोचा कि बहिन मिलने आयेगी तो उस पर यह मौत थोप दूंगी। बहिन आई। उसकी गोद में लेते ही लड़की जीवित हो गई। बहिन बोली, पूर्वजन्म में अपन दोनों बहिनें थीं। कूकड़ माकड़ नाम था। डूंगर पर दावाग्नि लगी तो तू अपने बच्चों को छोड़ भागती बनी। इस पर तेरे दोष लगा जो अब भोग रही हो। मेरे आसमाता का इष्ट था सो मैं बाल-बाल बची रही। ए आसमाता ! तू ब्राह्मणी पर जैसी तुष्टमान हुई वैसी सब पर होना और रानी जैसी बेअक्ल किसी को मत देना।

अम्बाबाई ने डाड़ा वावजी के व्रत और कथा सम्बन्धी जानकारी देते बताया कि होली के बाद आने वाले दीतवार को डाड़ा बावजी का व्रत किया जाता है। यह व्रत अलूणा यानी बिना नमक मिले आटे के दो चंदक्ये यानी बड़ा रोट बनाकर पूरा जाता है। इनमें एक रोट सूरज बावजी के सांड यानी गाय के केड़े यानी बछड़े को खिलाया जाता है और दूसरा खुद के लिए बनाया जाता है। इस रोट के बीच का हिस्सा बारी यानी छोटी खिड़की, छिद्र के रूप में खुला रखकर सूरज के दर्शन किये जाते हैं। यह रोट पानी अथवा दही से भी खाया जाता है।

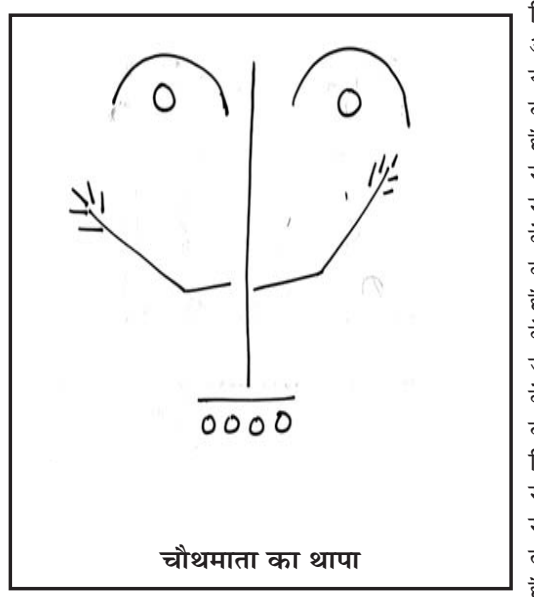

चौथमाता का थापा

डाड़ा से तात्पर्य दिन से है। दिन के बावजी अर्थात् देवता सूर्य हैं। दीतवार से तात्पर्य रविवार अर्थात् सूर्यवार से है। इस दिन लूम्ये की कहानी कही जाती है। यों दशामाता के दस ही दिन कही जाने वाली कहानियों के अन्त में लूम्या की कहानी कही जाती है।

अम्बाबाई ने बताया कि कार्तिक माह में प्रतिदिन जो कहानियां कही जाती हैं तब भी लूम्या की कहानी कही जाती है। करवा चौथ को भी इसकी कहानी कही जाती है। मिगसर माह में भी यह कहानी कहते हैं। इस पूरे माह में दही-भात खाया जाता है। इससे महिलाओं को श्रीकृष्ण जैसा वर यानी पति पाने का पुण्य मिलता है। कहावत भी है- 'दही-भात खावणो ने श्रीकृष्ण वर पावणो' अर्थात् दही-भात खाना और श्रीकृष्ण जैसा वर पाना।

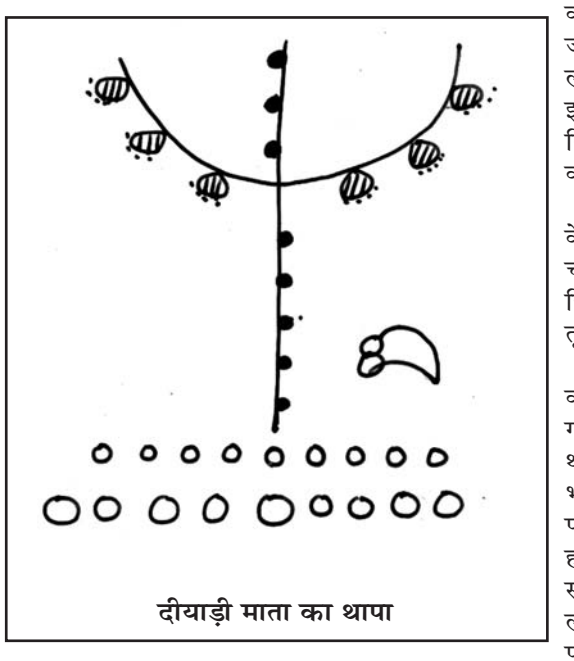

दीयाड़ी माता का थापा

पूरे माह जमीन पर सोया जाता है। यह महीना गोप महीना कहलाता है। पहले गोपियां जमुनाजी में नंगी नहाती थी। लूम्या श्रीकृष्ण का साथी रहा। इस कहानी का हुंकारा नहीं दिया जाता है। लूम्या की कहानी इस प्रकार है–

श्रीकृष्ण भगवान जमुनाजी के घाट गोपियों के साथ नहाने चले। लूम्या भी साथ चलने की जिद्द कर बैठा। कृष्ण ने कहा, तू मेरे साथ गड़बड़ करेगा।

लूम्या ने कहा, कुछ नहीं करूंगा। वो साथ हो लिया। गोपियां जमुनाजी में नहा रही थी। लूम्या उनके कपड़े लेकर भाग गया। गोपियां निकले तो पहनें क्या? कृष्ण से बोलीं, हमारे कपड़े कहां गये? आपके साथ कौन था? कृष्ण बोले, लूम्या था। उन्होंने लूम्या को जा पकड़ा। पूछा- गोपियों के कपड़े क्यों ले आया? लूम्या बोला- वे जल में नंगी क्यों नहाती हैं? उन्हें मालूम नहीं, जल में तैंतीस करोड़ देवताओं का निवास रहता है।

कृष्ण बोले, जो हो गया सो हो गया। अब कपड़े लाकर दो। लूम्या बोला- गोपियां जो धर्म करे, उसमें से आधा हिस्सा मुझे दें। मेरे नाम की कहानी कहें। वाटकी भर लड्डू का दान करें। घर की डेरी, देहरी में खड़ी रह जो भी दान करें उसका फल मुझे मिले। कृष्ण ने जो कुछ लूम्ये से कहा, सारी बातें स्वीकार कीं तब लूम्ये ने गोपियों के कपड़े जहां पड़े थे वहां कदम्ब की डाल पर जाकर रखे।

अम्बाबाई के वहां घर की दीवाल पर दशामाता, दीयाड़ीमाता तथा चौथमाता के थापे बने देखे। अम्बाबाई ने बताया कि होली के ठीक दूसरे दिन से दस दिन तक दशामाता के व्रत शुरू हो जाते हैं। दस ही दिन कहानियां सुनकर औरतें व्रत पूरती हैं। एक समय भोजन करती हैं। दशामाता का थापा वृक्ष की छाया में बैठ गुलाल को पानी में घोलकर जो गाढ़ा घोल बनता है, उससे दीवाल पर बनाया जाता है। चौखुणे थापे में नीचे से भीतर जाने का मार्ग है। भीतर ऊपर ही ऊपर दोनों कोनों में चांद-सूरज बने हैं।

बीच में पीपल का वृक्ष, पास में चौपड़ खेलते महादेव तथा पार्वती। नीचे सात्या बना हुआ है। सात्ये के पास एक ब्राह्मण का पुतला बना है जो महादेव-पार्वती के जीतने-हारने की साख भरता है। दीयाड़ी का थापा कुंकुम से बना हुआ है। नवमी को पूजने के कारण त्रिशूल बनाकर उसके नीचे नौ बिंदियां लगाई जाती हैं। त्रिशूल के पास गुग्गे का अंकन बना है। अम्बाबाई ने बताया कि यह थापा गुजरगौड़ों में ही बनाया जाता है। बड़ेरों के अनुसार बुढापे में ब्याहे गये दम्पत्ति के लड़का हुआ। कुछ समय बाद ही दोनों चल बसे तब गुग्गे ने उस शिशु को पालपोष कर जीवित रखा। गुग्गे का अर्थ चील से भी है सो कहीं-कहीं चील भी मांडी जाती है। कहीं उल्लू मांडा जाता है।

वहीं पर चौथमाता का थापा भी पत्थर की दीवाल में बना देखा। अम्बाबाई ने बताया कि कहीं-कहीं चौथमाता के चंवर ढोलते एक ओर काला भैरु तथा दूसरी ओर गोरा भैरु दिखाये जाते हैं। कई घरों में चौथमाता काच में स्थायी रूप से जड़ी मिलती है।

क़मर मेवाड़ी के नाम साहित्यकारों के पत्र (5)

शब्द रंजन के 15 मार्च 2024 के अंक में आप पढ़ चुके हैं, क़मर मेवाड़ी के नाम साहित्यकारों के पत्रों में नंद भारद्वाज, सुरेश तिवारी, शांति भारद्वाज, स्वयं प्रकाश, शंभुनाथ, अनिल सिन्हा, से. रा. यात्री तथा शिवरतन थानवी के पत्र। यहां पढ़िये हसन जमाल के पत्र –

(1)

हसन जमाल का जोधपुर से लिखा दिनांक 11 अप्रेल 1987 का पत्र –

भाई क़मर साहब,

आपकी कहानियों के बारे में मुझे गलतफहमी थी– 'न्याय' के ज़माने से पर 'इतने सारे सुख' (मधुमती) पढ़ने के बाद अपनी राय बदलने के लिए मजबूर हुआ हूं इसीलिए यह पत्र

राजस्थान साहित्य अकादमी का जयपुर में आयोजित 'डॉ. रांगेय राघव कथा पुरस्कार–2000' कथाकार क़मर मेवाड़ी को प्रदान करते हिंदी के विख्यात साहित्यकार निर्मल वर्मा और साहित्य अकादमी के अध्यक्ष डॉ. पूनम दईया और उपाध्यक्ष डॉ. हेतु भारद्वाज।

लिख रहा हूं। हालांकि मुझे आपके व्यवहार से सख्त शिकायत है। ख़ैर उसे जाने दीजिये और एक अच्छी कहानी के लिए मुबारकबाद कुबूल फ़रमाइये। उम्मीद है, खैर–ओ–खूबी से होंगे।

आपका
हसन जमाल

(2)

हसन जमाल का जोधपुर से लिखा दिनांक 22 फरवरी, 2002 का पत्र –

क़मर भाई आदाब,

सम्बोधन का दीपावली अंक मिला। एक ही अंक में नंदकिशोर आचार्य का साक्षात्कार और स्वयं प्रकाश का प्रसंगवश देखकर सुखद आश्चर्य हुआ। ये खुलापन अच्छा लगा। साक्षात्कार में जहां आचार्यजी नपे–तुले अन्दाज में सुथरी व निथरी भाषा में जवाब देते हैं, वहीं स्वयं प्रकाश ने आक्रोश से काम लिया है। कहीं–कहीं तो वो अफसोसनाक हद तक अफसोसजनक भाषा लिख गये हैं। वैसे प्रेमचन्द की परम्परा का सवाल गौरतलब है, खासतौर से इसलिए भी कि मूलत: प्रेमचन्द उर्दू के लेखक थे। स्वयं प्रकाश की तरह तहरीर के अन्तिम पैरा में हक़ब जानिब बातें लिखी गई हैं।

पर निजी तौर पर मुझे हैरत है कि 'शेष' का जिक्र उन्होंने दानिस्ता नहीं किया जबकि एक दराई से मैं अपना खूने–जिगर जला के दोनों जुबानों को करीब लाने की कोशिश कर रहा हूं। सम्बन्धों की कड़वाहट सच कहने में आड़े नहीं आनी चाहिए थी। खैर! 'राष्ट्र और मुसलमान' पर दो समीक्षाएं हैं। डॉ. वेदप्रताप वैदिक ने कुद बुनियादी सवाल उठाये हैं। उनका यह कहना सही नहीं है कि मुस्लिम जगत में बुनियादी सवाल उठाने वाले विचारक नहीं हैं। बहुत से तथ्य उनके ज्ञान में नहीं है। शेष–25 में निसार अहमद फारूकी के लेख 'उप महाद्वीप में इस्लामी आधुनिकता' में इज्तिहाद पर सैर हासिल बहस की गई है। बन्धु कुशावर्ती ने पाण्डुलिपि के संशोधन व सम्पादन की ओर इशारा किया है, यही मत मेरा भी रहा है।

आपका
हसन जमाल

(3)

हसन जमाल का जोधपुर से लिखा दिनांक 12 मार्च, 2003 का पत्र –

क़मर साहिब,

आदब,

'मधुमती' में 'दोस्त' शीर्षक से आपकी तीन कविताएं पढ़ीं। अच्छी लगीं। दिल को छू गई। शायद इसलिए कि ये मेरे महमूसात के करीब हैं। अपनी 61 साल की जिन्दगी में ऐसा उजाड़पन मैंने नहीं देखा, जो आजकल देख रहा हूं। कहीं से कोई पुकार सुनाई नहीं देती। कोई मुस्कराहट दिखाई नहीं देती। दस लाख की आबादी में पागलों सा फिरता हूं मैं।

आपका
हसन जमाल

(4)

हसन जमाल का जोधपुर से लिखा दिनांक 23 दिसम्बर, 2003 का पत्र –

मुहतरम क़मर साहिब, आदाब,

19.12.2003 का खत मिला। आज तारीख तब 'सम्बोधन' नहीं मिला। मुझे स्वामी वाहिद काज़मी के लेख पढ़ने थे। उन्होंने लेखों की जीरोक्स भिजवाई थी, जो कल मिली। पढ़ लिया है। स्वामी ने आपकी बड़ी तारीफ की और खत में मुझे खूब गालियां दीं। मालूम नहीं, खुदा की क्या मस्लोहत है कि बुढ़ापे में बिला वजह यूं ज़लील होना पड़ रहा है। आप में ये खूबी है कि आप फौरी तौर पर रद्दे–अमल जाहिर नहीं करते और 'आ बैल मुझे मार' किस्म के लोगों से बचे रहते हैं। मैं चूंकि प्रतिक्रियावादी हूं इसलिए नाहक़ मारा जाता हूं। नये साल की मुबारकबाद।

आपका
हसन जमाल

(5)

हसन जमाल का जोधपुर से लिखा दिनांक 24 मई, 2004 का पत्र –

मुहतरम क़मर मेवाड़ी साहिब!

क्या आपको मेरी याद कभी नहीं आती? क्या मैं वाकई इतना बुरा हूं कि आपको मुझ से दूर रहना चाहिये? मैं जज़्बात की रौ में बहुत कुछ बक जाता हूं मगर मेरे दिल में मैल नहीं रहता और फिर हमारे दरमियान टक्कराहट को कोई इयशू भी नहीं है। आप अपना काम कर रहे हैं– मैं अपना फिर ये बदगुमानियां व ग़लतफ़हमियां क्यों?

मैं समझता हूं, आपके दिल में भी मेरे खिलाफ़ कुछ नहीं है। वरना आप एक जनवरी 04 को अज़ खुद फोन क्यों करते? अगर मैंने अपने महसूसात के आधार पर अगर ये कह दिया कि चन्द जुम्लों का एडिटोरियल तो इसमें बुरा मानने की क्या बात थी। आपको मुख़्तसर बात कहने का हुनर आता है। मैं तो वह भी नहीं जानता।

बहरहाल, आप मेरे साथ चाहे जैसा सुलूक करें, मैं यही अर्ज करूंगा कि जब आपको मुझसे कोई अपेक्षा नहीं है और न मैं 'सम्बोधन' से कोई उम्मीद रखता हूं तो फिर से दूरियां क्यों? जिन्दगी का कोई भरोसा नहीं। खान साहब चले गये। कल का कौन कह सकता है। मुझमें एक ही बड़ी खराबी है कि जवाब नहीं मिलने पर बौखला जाता हूं। खुदा करे, आप सेहतमंद व सलामत रहें।

आपका
हसन जमाल

(6)

हसन जमाल का जोधपुर से लिखा दिनांक 24 जून, 2004 का पत्र –

प्रिय महोदय,

'सम्बोधन' अप्रेल–जून 2004। अच्छा लगा कि अब ये नियमित हो गया। क्या पता था, डॉ. अज़रा नूर इतना जल्द बेनूर करके चली जाएगी। उनके आखिरी दिनों में मेरा उनसे पत्र–व्यवहार रहा। वे उर्दू साहित्य पर एक मज़मून लिखना चाहती थीं। खुदा जाने, लिख पाई या नहीं? जन नाटककार शिवरामजी से कभी मेरी मुलाक़ात न होने पाई मगर पल्लव की बातचीत में मैंने उन्हें करीब से जान लिया है।

इधर पल्लव के इंटरव्यू बढ़िया जा रहे हैं। ये सिलसिला जारी रहना चाहिये। स्वयं प्रकाशजी भोपाल चले गये। मेरा ख्याल है, सैटल होने के बाद वो नये दमखम से कुछ धमाके करेंगे। प्रशंगवश में वो बहुत कुछ कह जाते हैं मगर मुख़्तसर तबीअत नहीं धापती।

स्वामी वाहिद काज़मी की अपनी शैली है–धमाकाखेज़। जो कहना, बेबाकपन से कहना और दलीलों के साथ। तस्लीमा नसरीन को उन्होंने आईना दिखा दिया। काश! तसलीमा हिन्दी पढ़ना जानतीं। कई बार बेजा तारीफों से इंसान बेलगाम हो जाता है। इस्लाम के खिलाफ उनकी टिप्पणियां बदमज़ा कर देती हैं। अगर आपको इस्लाम पसन्द नहीं है तो उसे छोड़ो, किसने आपको रोका है।

आपका
हसन जमाल

(7)

हसन जमाल का जोधपुर से लिखा दिनांक 22 नवम्बर, 2004 का पत्र –

आदरणीय क़मर मेवाड़ी साहिब, आदाब,

'मंथन' में आपकी कहानी 'पिताजी चुप हैं' का पढ़ना अच्छा लगा। शॉक ट्रीटमेंट की ये कहानी मार्मिक बन पड़ी है। अंत में एकाध पैरा और बढ़ जाता तो पिताजी के हृदय–परिवर्तन की स्वाभाविक परिणति हो जाती पर आपको छोटी कहानियां लिखने में कमाल हांसिल है।

आपका
हसन जमाल

(8)

हसन जमाल का जोधपुर से लिखा दिनांक 29 दिसम्बर, 2004 का पत्र –

आदरणीय क़मर साहिब, आदाब,

पत्र के साथ विज्ञप्ति मिली। विज्ञप्ति इंशाअल्लाह अगले अंक में जायेगी। इस बार अंक देर से देने का मन है लेकिन इतना विलम्ब से भी नहीं, जनवरी 05 अंत तक। सुझाव जल्द भेजूंगा। पुस्तकें नहीं भेज पाऊंगा। अच्छी पुस्तकें 'शेष' को कम ही मिलती है।

यह जानकर खुशी हुई कि आप मेरे पत्रों का उपयोग करेंगे। किसी पत्र का प्रकाशन मेरे लिए भी अजूबा होता है क्योंकि लिखने, भेजने के बाद मैं भूल जाता हूं कि मैंने क्या लिखा। पिछले दिनों 'सूत्र' में मेरा एक पत्र छपा था। मुझे लगा, वह किसी और ने लिखा। मेरे दिमागी फेज ऐसे ही हुआ करते हैं। बुरा न माना करें।

पत्रिका चर्चा में 'शेष' का जिक्र न होने से हैरत होती है। दुआ करें 'शेष' फिर भी शेष रहे। 'सम्बोधन' से आपने लम्बी व सफल पारी खेली है। मैं तो आपके सामने चूजा हूं पर कभी–कभी बहक जाता हूं।

आपका
हसन जमाल

(9)

हसन जमाल का जोधपुर से लिखा दिनांक 18 मई, 2005 का पत्र –

मुहतरम क़मर मेवाड़ी साहिब, आदाब,

आपका खत मिला। बिल्कुल ख़ुश न हुआ। आपने फिर मेरे चूंटिया भरा। आप ऐसे क्यों हैं? मैंन आपका क्या बिगाड़ा है? आप अपना काम कर रहे हैं मैं अपना। फ़ारूक़ अफ़रीदी के बार–बार दरयाफ्त करने पर ही मैंने आपको खत लिखा था कि

'संबोधन' के स्वर्णजयंती वर्ष पर आयोजित समारोह में हिंदी के प्रसिद्ध कवि अशोक आत्रे नई दिल्ली को सम्मानित करते मधुसूदन पाण्ड्या, कर्नल देशबंधु आचार्य, वेद व्यास और 'संबोधन' के संपादक क़मर मेवाड़ी

आपके सोये हुए जज्बात जाग उठें। भले ही आप ऊपर से नाराज हों, अन्दर मेरे लिए नर्म गोशा रखते हैं, ऐसा मैं मानता हूं।

मैं क्या सोचता हूं, क्या लिखता हूं, यह मेरा सिरदर्द है। आप क्यों परेशान होते हैं? मैं जमाने भर से नाराज, कभी ख़ुश हो ही नहीं सकता। इसलिए खुश रहने की आपकी दुआ बेअसर रहेगी। आप हमेशा मुझे शंका की नज़र से देखते हैं, कभी अपना भी मुहासवा कीजिये फिर पता चल जाएगा, कहां गांठ पड़ी है?

बहरहाल आपने खत लिखा है तो अभी उम्मीद की किरण बाकी है। मैं खत अच्छे लिखता हूं तो मेरे खत ही क्यों नहीं छाप देते? लोगों को पता तो चले कि यह धुआं–सा कहां से उठता है। बशीरवद् ने सही कहा था–

यूं ही कोई बेवफ़ा नहीं होता
मैं तो बावफ़ा हूं, अपनी आप जानो।
बिना वजह खार–क्रोध रखने से क्या हासिल?
जो मजा मुहब्बत में है, वो अदावत में नहीं
न आप बुरे, न मैं बुरा, फिर ये दूरियां क्यों?

आपका
हसन जमाल

स्मृतियों के शिखर (181) : डॉ. महेन्द्र भानावत

दीन दयालु परम कृपालु ही थे दीनदयाल ओझा

27 अक्टूबर 1929 को जैसलमेर में जन्में श्री दीनदयाल ओझा अपने अन्तिम पड़ाव में कुछ कम सुनने लग गये थे और कुछ स्मृति विहीन भी होते जा रहे थे तब भी वे मुझसे अपनी बुलन्द आवाज लिए बातचीत करते और परिवार की कुशलक्षेम पूछते, बालबच्चों को आशीर्वाद देते। 02 मार्च 2024 को अचानक डॉ. सुरेन्द्र छंगाणी ने सूचित किया कि नानाश्री का स्वर्गवास हो गया है और हम सभी जैसलमेर जा रहे हैं। पहले तो विश्वास ही नहीं हुआ पर अविश्वास की कोई गुंजाइश भी नहीं थी। एक पके हुए आम की तरह वे ताउम्र अपनी वाणी और व्यवहार से लोगों को जीवनरस देते रहे।

ओझाजी से मेरा पहला परिचय बीकानेर में 1955 में हुआ। अगरचन्दजी नाहटा ने मुझे सूचना दी थी कि दीनदयालजी ओझा भी यहीं रहते हैं। उनसे भी कभी मिलते रहिये। तब ओझाजी वहां रेलवे के दफ्तर में काम करते थे। उनके साथ मोहनलाल पुरोहित भी उसी दफ्तर में सेवारत थे। ओझाजी ने मुझे उनसे भी मिलवाया। वे भी अच्छे लेखक थे। उन्होंने मुझे व्रत कथाओं पर उनकी छपी एक पुस्तक भी भेंट की थी।

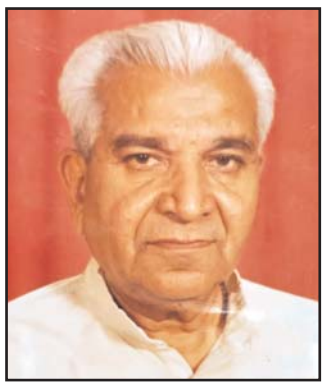

मैं बीकानेर 1955 से 58 तक रहा। इस दौरान ओझाजी से मेरा मिलना होता ही रहता। वे बहुत ही मृदुभाषी, असाधारण सहज, सुलभ तथा पारदर्शी जीवन जीने वाले शान्त एवं ठण्डी प्रकृति के परम आत्मीय व्यक्ति थे। दो-चार बार मैं उनके रेलवे दफ्तर भी गया। एक बड़े हॉल में अलग-अलग कुर्सी-टेबल पर बाबू और साब लोग बैठे अपने साथ ऊंचे लगे फाइलों के अम्बार में दबे-दुबके शान्त भाव से काम करने वाले लेकिन स्नेहिल व्यवहार के व्यक्ति लगे। उन्हें देख मुझे राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त की ये पंक्तियां स्वयमेव याद आ जातीं-

यह आधुनिक शिक्षा किसी विध प्राप्त भी यदि कर सको।
तो लाभ क्या बस क्लर्क बनकर पेट अपना भर सको।।
लिखते रहो जो सिर झुका सुन अफसरों की गालियां।
तो दे सकेंगी रात को दो रोटियां घरवालियां।।

जैसलमेर मैं दो-तीन बार गया। बाड़मेर भी गया। अपने शोध दल के साथ एकबार तो तीन दिन तक वहां की धर्मशाला में लंगा-मांगणियार गायकों द्वारा गाये जाने वाले विभिन्न राग-रागनियों का रेकार्डिंग करते रहे। हमारे साथ जोधपुर से राजस्थान संगीत नाटक अकादमी से कोमल कोठारी तथा सचिव सुधा राजहंस और दिल्ली संगीत नाटक अकादमी की भी रेकार्डिंग यूनिट थी। यह अनुभव बड़ा ही रोचक तथा रोमांचित किये रहा।

एकबार जैसलमेर के आसपास के गांव-ढाणियों तथा मेलों में भी वहां के जीवनचक्र का अध्ययन किया। होली पर रम्मतों के खेल-प्रदर्शन भी देखे। ओझाजी ने मूमल की मेड़ी के अवशेष और काक नदी की खोई स्मृतियां भी उकेरीं। उन्हें वहां की धरोहर की जमीनी जानकारी पर महारात हांसिल थी।

अपनी विरासत के प्रति सच्ची लगन और उसके संरक्षण के प्रति जागरूकता का ही कमाल रहा कि अपनी लेखनी द्वारा जैसलमेर दिग्दर्शन, जनपदीय संत और उनकी वाणी, सोढ़ी नाथी रा गूढ़ार्थ, मूमल और उसका जीवनवृत्त जैसी कृतियां दीं। गोस्वामी श्री हरिराम महाप्रभु के व्यक्तित्व एवं कृतित्व के अलावा उनका पद साहित्य तथा उन पर लिखा शतक भी उनकी शोधात्मक कृतियां हैं। राजस्थान का वासन्तिक पर्व गणगौर पर भी उनकी लोकजीवनी पर लिखी मूल्यवान कृति है जिससे प्रभावित हो मैंने भी राजस्थान की गणगौर तथा इस प्रदेश के विविध लोकनाट्य-ख्यालों पर भी भवाई, रावल, तुर्राकलंगी, रम्मत पर शोधात्मक पुस्तकें लिखीं।

ओझाजी यों तो शोधात्मक रूचि सम्पन्न लेखक थे परन्तु उनकी कविताएं भी समाज-परिवेश की पूर्ण प्रतिनिधित्व लिए थीं। बानगी स्वरूप पानी पर लिखी ये पंक्तियां-

पानी की कमी थी जब
तब पानी रखते थे सब
आज सर्वत्र पानी-पानी हो गया
तो न जाने
वह पानी कहां खो गया।

इसी प्रकार चुग्गा और रोटी की चन्द पंक्तियां-

मैं प्रत्यख देख रहा हूं
चिड़ी से चुग्गा उतना दूर नहीं है
जितनी दूर है मनुष्य से रोटी और रोजी।

समाज पर ऐसी कटाक्ष करती, तिलमिला देने वाली मार्मिक स्थिति को बेलाग प्रस्तुत करने वाले कवियों का अब तो टोटा ही मिलेगा।

ओझाजी अपनी मातृभूमि और उसकी माटी के जीवन्त साधक थे। उनका साहित्य साधना सदन सचमुच में विविध विषयक ग्रन्थों तथा पत्र-पत्रिकाओं का सुसज्जित भण्डार था। वे अपने पास आई हर पुस्तक तथा पत्र-पत्रिका का बड़े मनोयाग से उत्तर लिखते। यह कला उन्होंने अगरचन्दजी नाहटा से सीखी।

ओझाजी के पिताश्री माणकलालजी सामन्तीकाल में राजकाज के हाकम रहे। उनकी कार्य के प्रति निष्ठा, समर्पण भाव तथा ईमानदारी के गुण ओझाजी को संस्कारवत मिले। पिताजी सबके बीच नगा माराज के नाम से अपनी लोकप्रिय पहचान लिये थे।

उदयपुर में जब ओझाजी के जमाता डॉ. पुरुषोत्तम छंगाणी हिन्दुस्तान जिंक में राजभाषा हिन्दी अधिकारी बनकर आये तो उन्होंने मुझे सूचना दी तब से आज भी उस परिवार से मेरा पारिवारिक जुड़ाव बना हुआ है। छंगाणीजी जब थे तब जिंक द्वारा आयोजित अनेक हिन्दी संगोष्ठियों, साहित्य समारोहों तथा काव्य-गोष्ठियों का बड़ा मजमा रहा।

मेरे संग्रह में ओझाजी के कुल तीन पत्र सुरक्षित हैं। पहला पत्र उन्होंने मुझे बिन्नाणियों का चौक, बीकानेर से लिखा जो 28 अप्रेल 1970 का है। चार पृष्ठीय उस पत्र के कुछ उल्लेखनीय अंश इस प्रकार हैं-

प्रिय श्री महेन्द्र भानावत
सप्रेम वन्दे

पिछले दो-तीन वर्षों तक निरन्तर मौन और अप्रकाशित रहने के कारण कई प्रेरणादायक मित्रों से सम्बन्ध विशेषत: सृजनधर्मी सम्बन्ध एक तरह से कट सा गया और मैं अपने आपको कुछ-कुछ एकाकी और कटा हुआ सा पाने लगा। आपके अनेकों प्रेरणादायक एवं स्नेह भरे उपालभपूर्ण पत्र भी मिले परन्तु न जाने किन कारणों से उत्तर न दे पाया। मैं आज भी समझ नहीं पा रहा हूं परन्तु अब कृतसंकल्प से साहित्य साधना की दिशा में आगे आने का विचार कर लिया है और संभवत: आपने देखा होगा इन दिनों फिर लेख आदि छपने लगे हैं।

पिछले तीन वर्षों में आपने जिस साधना, लगन और निष्ठा से कार्य किया है उससे लोकसाहित्य विशेषत: लोकनाट्यों के सन्दर्भ में अनेकों रहस्यों का उद्घाटन हुआ है। मैं उन सभी कार्यों के लिए आपको अपनी हार्दिक बधाइयां प्रेषित करता हूं।

आपका
दीनदयाल ओझा

दूसरे दो पत्र जैसलमेर उनके निवास साहित्य साधना सदन, केलापाड़ा से लिखे गये हैं। दोनों ही पत्रों की तारीख 10 मार्च 2007 है जो गलत है। दूसरा पत्र पहले पत्र के बाद का लिखा गया है जिसमें मेरे द्वारा प्रेषित तीनों पुस्तकें पढ़कर उन्होंने अपनी संक्षिप्त टिप्पणी लिखी है। दोनों पत्र दो-दो पृष्ठ के, अपने नाम के लेटर पेड पर लिखे हैं। पहला पत्र पुस्तकें प्राप्ति के सन्दर्भ का है जिसके प्रमुख अंश हैं -

समादरणीय साहित्य विद्वत्वर,
लोककला संस्कृति मर्मज्ञ
एवं कुशल व्याख्याता
डॉ. महेन्द्र भानावत
सादर वंदन अभिवंदन

आप द्वारा प्रेषित तीन ग्रन्थ राजस्थान के लोकनृत्य, लोककलाओं का आजादीकरण एवं जनजातियों के धार्मिक सरोकार को प्राप्त कर धन्य हुआ। आपने लोक को अन्तर चक्षुओं से निहारा, ह्रदय पटल पर स्थायी रूप से अंकित किया और जीवन में सचेतन हो जीया है और उसी को सहज, सरल और चित्रात्मक शब्दावली में अभिव्यक्त किया है। तीनों ग्रन्थ स्वतंत्र सत्ता रखते हुए भी एकात्म भाव को लिए हुए हैं। सहज, प्रसाद गुणात्मक शैली में लिखे तीनों ग्रन्थों का अधिकांश रूप से अध्ययन कर न केवल ज्ञानवर्धन किया अपितु अनेक अज्ञात सांस्कृतिक कलात्मक लोकविश्वासजन्य जानकारियों से अवगत हो धन्य हुआ। लगा जैसे इन्द्र से नहीं महेन्द्र से अजर अमर अनश्वर मणिरत्न प्राप्त हो गया हो।

साहित्य साधक कवि समीक्षक डॉ. नन्द चतुर्वेदी का यह कथन सत्य है, ''डॉ. महेन्द्र भानावत के पास विशाल स्मृति कोष है। डॉ. महेन्द्र भानावत के आलेखों का सत्य यह है कि अनेक कामनाओं, निहितार्थों और लोक सत्य की धरा का संरक्षक समाज अपनी संस्कृति के क्षेत्र को दीनता के साथ न देखता रहे अपितु वह यह गर्व कर सके कि लोकसंस्कृति के अक्षय स्रोत अब भी सबके पास हैं और उसका सच्चा ईमानदार व्याख्याता है डॉ. महेन्द्र भानावत।''

भारतीय लोक के पहाड़ी, मरुस्थली, मैदानी मन-मानस में जो जीवन के अन्तर सत्य, मनोभाव, विश्वास, उत्सव, व्रत, गीत, नृत्य, मनोरंजन और संस्कार सभी कुछ इन तीन ग्रन्थ रत्नों में पूर्ण प्रामाणिकता के साथ व्याख्यायित हैं। मैं डॉ. भानावत की लोकजन्य दृढ़ आस्था, विश्वास, साहचर्य और गरिमामय व्याख्या का ह्रदय से अभिनन्दन करता हूं।

प्रतिपल नव-नव चेतना, नव-नव चिन्तन, नव-नव दर्शन के साथ नव-नव शब्दावलियों का प्रयोग करने वाले एवं अपनी ही मादक अन्तर आल्हादिनी शक्ति के साथ जीवन जीने वाले विरल ही होते हैं। उन विरल व्यक्तियों, मनीषियों और चिन्तकों में डॉ. भानावत का नाम सर्वोपरि है।

सत्य तो यह है कि आपने ग्राम्य एवं नागर तथा पुरवासी और अरण्यवासी लोक का जीवन देखा ही नहीं, सचेतन हो, तदनुरूप हो जिया है। आपकी सहज, सरल मुक्त मन अभिव्यक्ति, मिलन, संवाद प्रति पल याद करता रहता हूं। अधिकांश समय स्वाध्याय में, कुछ रूग्णता में, कुछ लेखन, संगोष्ठियों में शेष भोजन, शयन और प्रमाद में बीत जाता है लेकिन आप जैसे उदरमना, सहज, सरल, सह्रदय सज्जनों की अनुकम्पा से आत्मबल और जीवट से जीने की उत्कट अभिलाषा के साथ जी रहा हूं।

आपका
दीनदयाल ओझा

इस पत्र के अन्त में मेरे परिवार के सभी सदस्यों को हार्दिक मंगल कामनाएं लिखीं हैं साथ ही अग्रजवत श्री नंद भारद्वाजजी को प्रणाम निवेदन करना लिखा है। यहां ओझाजी की स्मृति कुछ कमजोर होती लगती है इसीलिए वे मेरे अग्रज डॉ. नरेन्द्र भानावत की जगह भारद्वाज लिख रहे हैं।

जैसलमेर में वहां के हिन्दी विभाग के राजकीय महाविद्यालय के व्याख्याता डॉ. आईदानसिंह भाटी उनके सम्पर्क में सर्वाधिक रहे। मधुमती के जून-जुलाई 2010 के अंक में 'संस्कृति को संजीवनी देती एक कलम' शीर्षक लेख में उनकी यह टिप्पणी ओझाजी के समग्र व्यक्तित्व एवं कृतित्व का प्राणवंत परिशीलन है। लेख के अन्त में डॉ. भाटी लिखते हैं-

''माटी और मां को आदर देने वाले दीनदयालजी ओझा थार के पानी को बचाने के लिए ही सारे उपक्रम कर रहे हैं। इस धरती से माण्ड के गीतों की सुगन्ध न उजड़ जाये, रेत के रावड़ियों की रक्तिमता में कमी नहीं आए, काक की सूखी काया पर कोई अतिक्रमण न हो, मूमल के भग्न खण्डहरों को कोई अपवित्र न कर दे, इसके लिए ओझाजी की बेचैनी साफ देखी जा सकती है।

देखने वालों को उनकी आंखों में काचबिये की करूणा, वायरिये की धीमी-मधरी सुगन्ध, करहले की लय-चाल, बरखा की बून्दों में नहायी पनिहारियां, नाथी सोढ़ी के गूढ़ार्थों के साथ इतिहास की धड़कनें साफ दिखाई देंगी। मैंने उनकी आंखों में लहराती सन्तों की ज्ञान-साधना, लोक का हेत-प्रेम और इतिहास की बड़गड़ाँ स्पष्ट देखी हैं। आपको यदि अपनी परम्परा से प्रेम है, इतिहास से लगाव है, साहित्य से साक्षात्कार करना है तो इस स्वर्ण-कमल से खिले जैसलमेर की गलियों का एक चक्कर अवश्य लगाएं, जहां इस स्वर्ण-कमल की पीताभता को बचाने के लिए एक कलम साधनारत है।''

ओझाजी जैसे साहित्यसेवी बहुत कम ही मिलेंगे जिनकी सहानुभूति सबके साथ स्मरणीय रही। अब वे जब नहीं हैं तब उन जैसा याराना निभाने वाला खोजने पर भी नहीं मिल रहा है। जैसलमेर के वे पहले ऐसे खोजक थे जिन्होंने अपनी लेखनी से इस उपेक्षित क्षेत्र को आंचलिकता की सरहद से विश्वस्तरीय पहचान देने का आजीवन अथक प्रयास किया।

शब्द रंजन

उदयपुर, सोमवार 01 अप्रेल 2024

सम्पादकीय

होलीवृक्ष हेमरा

यों तो पूरी सृष्टि ही अजूबों, चमत्कारों और विस्मयों से लबालब है। सबके पीछे अनगिनत आख्यान, कथन, किस्से, ऋषि-श्राप और जाप-तप जैसे दृष्टान्त कण्ठासीन अथवा ग्रन्थों-पोथियों में प्रचलित हैं।

फोटो - राजेन्द्र पालीवाल

हेमरा ऐसा वृक्ष है जो सीधासादा, हल्का, कोमल तथा कई प्रकार से उपयोगी है। वनवासियों में प्रचलित धारणा के अनुसार यह भगत प्रहलाद को मारने वाली होली का प्रतीक है। मेवाड़ में हेमरा की भरमार है। होली पर इसे ही जगह-जगह रोपकर जलाया जाता है।

यह वृक्ष सीधा तना रहता है। 60-70 फीट की ऊंचाई पर इस पर गिद्ध अपना घोंसला बनाते हैं। इसका अधिकांश प्रयोग आरसीसी पद्धति से भवन निर्माण में बल्लियों अथवा हागटियों के रूप में किया जाता है। कोमल होने के कारण लोहे की कितनी ही कीलें लगाई जांय, यह फटता नहीं है।

हेमल याकि सेमल पर आने वाली कलियों का साग बड़ा स्वादिष्ट होता है। इसके पुष्प झड़ने के बाद अण्डाकार तथा पंचकोणीय फल फटने पर बड़ी ही सुन्दर सफेद रेशमी रुई देता है जो गर्म तासीर होने से जोड़ों के दर्द के लिए रामबाण होती है। फलों के भीतर निकलने वाले बीजों से तेल भी निकाला जाता है। आमजन को इसके इतने उपयोग की जानकारी नहीं है पर होली के दिनों में इसका महत्त्व एक अन्य रूप में सर्वत्र मेवाड़ में है।

इधर होली एक पूर्णरूपेण सजीधजी महिला के रूप में ऐसी मानवी है जो सभी तरह के अलंकरणों, गहनों से सजी हुई है। होली जलने के पूर्व संध्या को प्रत्येक गली- मोहल्ले की कन्याएं अपने-अपने मोहल्ले की होली के स्थान पर नए परिधान में एकत्र होती हैं। वे अपने साथ विभिन्न गहनों के रूप में गोबर से निमित्त बडुल्यों की मालाएं लाती हैं जिन्हें उनका भाई होली को धारण कराता है। सभी बालिकाएं मिलकर होली सम्बन्धी गीत गाती हैं जिनमें एक-एक गहने का नाम लेकर उसका सिणगार बखानती हैं।

दूसरी ओर बालकों की टोलियां मिल आसपास के गली-मोहल्लों के घरों, बाड़ों तथा निर्जन स्थानों में पड़े पुराने कबाड़जनित लकड़ी के झाड़-झंखाड़ ला-लाकर होली के इर्दगिर्द तरतीबबार जमाकर उसका खासा सणगार करते हैं।

होली जलाने पर उसके चारों ओर नवजात शिशु को परिक्रमा कराई जाती है ताकि उसे किसी प्रकार की दीठ यानी नजर नहीं लगे। परिक्रमा की यह क्रिया ढूंढ़ाना कहलाती है। कहा यह भी जाता है कि ढूंढ़ा नामक राक्षस से बचाव के लिए यह रस्म पूरी की जाती है। होली जलाने के दिन उसके कांटे उपाड़ कर उसी के कोमल छिलकों के साथ चबाने पर पान की तरह मुंह रच जाता है। अधजली होली को उसके खूंटे से उखाड़ पास के कुए, बावड़ी या जलाशय में डाल ठण्डी करने की परम्परा है।

काव्यपत्री

'शब्द रंजन' के गत होली अंक में कुछ साहित्यसेवियों पर दुमछल्ले दिये थे। उनके जवाब में कुछ पाठकों ने अपनी गुमनाम छल्लियां भेजीं। पढ़िये-

(1)
पुरस्कार लेने में ही यदि बीत गये दिन सारे।
अपना कर्म और लेखन क्या करने लगे किनारे?
इतने सारे पुरस्कार फिर अंत कबाड़ी ले जाएगा।
बदले में कुछ नहीं देगा जी धन्यवाद दे जाएगा।।

(2)
थेला भरते रहे जिन्दगी भर जो भी किये कुछ काम।
और अंत में थेला बन गये माया मिली न राम।।

(3)
अपने मुंह मियां मिट्ठू, नेले पे खुद ही देला।
क्या अजीब करते रहते हो, खेला पर बहु खेला।।

(4)
खबरनवीस बनकर आया था खूब जमाई धाक।
अब अंतिम स्वांसें गिनो अपने दिल में झांक।।

(5)
द्वापर युग में पर लगे अब परचम भी नाँह।
गोप ग्वाल ठण्डे हुए किसकी पकड़े बाँह।।

(6)
शब्दों का रंजन करो जिव्हा लापालोर।
चाहो दिन रात्रि कहो रात कहो शुभ भोर।।

(7)
उखड़ गये मुर्दे गड़े, प्रखर बने खर लाल।
टनटन करते बन गये, मूरख मदन गोपाल।।

(8)
धन्यवाद शब्दों को दें या रंजन करने वाले।
हंसते-हंसते गोरे हो गये जो पहले थे काले।।
घर बैठे ही मिला दिये जिनकी स्मृति थोड़ी छूटी।
याद किये उनको गालों पर कलियां हंसती फूटी।।

(9)
मातृ शक्ति को भूल गये प्रभु उनको वंदन कीजे।
मीठे चरके भुजा पापड़ी खाकर आशीष लीजे।।

(10)
छूट गये चकचक आलोचक तीसमारखां बनते।
चड्डी को पाजामा करते पक्षपात कर तनते।।
गुटबाजी के ऊंचे-नीचे नकली किले लगते।
हमसे बड़े न कोई बंधुवर कभी न कहते थकते।।

(11)
यह होली तो सबने देखी अगली किसने देखी।
बगुला भक्तों को सलाम हो मती बघारो शेखी।।

रतन जतन कर राखजो ए मां

आर्ची आर्केड रेजिडेंशियल वेलफेयर सोसायटी में शीतला सप्तमी पर शीतला माता के पूजन अवसर पर उपस्थित रीतिका पामेचा, सुलोचना शर्मा, कमला नलवाया, सरिता जैन एवं रंजना भानावत।

अब आप शब्द रंजन समाचार पत्र इस लिंक पर भी पढ़ सकते हैं-
https://thetimesofudaipur.com/shabd-ranjan/

हिरण्यकश्यप का महल

उदयपुर (ह. सं.)। दक्षिणी राजस्थान में एक महल होली को लेकर विशेष महत्व रखता है। आदिवासी सुदूर इलाके की पहाड़ियों पर स्थित इस महल में ही होलिका, भक्त प्रहलाद को गोद में लेकर जलाने बैठी थी। हिरण्यकश्यप का यह महल उदयपुर से करीब 40 किलोमीटर दूर जावर गांव में है। हजारों वर्ष पुराने इस महल के बारे में आज भी स्थानीय लोगों के मुंह से कहानियां सुनने को मिलती हैं। इतिहासकार चन्द्रशेखर शर्मा के अनुसार जावर माइंस क्षेत्र स्थित अरावली रेंज की पहाड़ियों पर इस महल के अवशेष दिखाई देते हैं। इस महल तक जाने के लिए पथरीले रास्तों से होते हुए करीब 4 से 5 किलोमीटर तक पहाड़ी पर चढ़ना

पड़ता है। वहां दूर पहाड़ी पर एक महल की परकोटेनुमा दीवार दिखाई देती है। ऊपर चढ़ने पर पहाड़ी के पहले भाग में महल के प्रवेश द्वार जैसे खण्डहर दिखाई देते हैं। हालांकि अब यह अवशेषों में तब्दील हो रहे हैं लेकिन अभी भी यह पौराणिक समय में भव्य महल होने का सबूत देता है। स्थानीय हनुमान मंदिर के पुजारी के अनुसर यहां हिरण्यकश्यप का महल है। भक्त प्रहलाद को मारने के लिए होलिका इसी स्थान पर आग में बैठी थी। उन्होंने बुजूर्गों से यह कहानी सुनी।

साहित्यकार डॉ. महेन्द्र भानावत ने बताया कि इतिहास के दृष्टिकोण से इसे लेकर काफी मान्यताएं जुड़ी हुई हैं। जावर किसी दौर में बहुत बड़े देश के रूप में जाना जाता था। वहां का राजा हिरण्यकश्यप था। हिरण्यकश्यप का महल काफी लम्बा चौड़ा होने के साथ कई बीघा क्षेत्र में फैला हुआ था। डॉ. भानावत ने बताया कि मेवाड़ में होली का अपना एक विशेष इतिहास और महत्त्व है। इतना ही नहीं पहाड़ी पर कई किलोमीटर में फैले इस महल के चारोंओर प्रवेश द्वार बने हुए थे। वहीं खण्डहर दीवारें महल की भव्यता की ओर इशारा करती हैं लेकिन वर्तमान में पूरा महल जमीन में समाया हुआ नजर आता है। इसी जगह राजा हिरण्यकश्यप का महल था जहां भक्त प्रहलाद का जन्म हुआ। प्रहलाद की बुआ होलिका उसे अपनी गोद में लेकर होलिका में बैठी थी। कहा जाता है कि इसमें प्रहलाद तो बच गया, लेकिन होलिका जल गई। तभी से देश में होली की शुरूआत हुई थी। यहां भगवान विष्णु का एक मन्दिर है। इसके सामने एक धूणी बनी हुई है। स्थानीय लोग अभी भी यहां गहरी आस्था और विश्वास रखते हैं। मांगलिक कार्यक्रमों और अन्य आयोजनों के लिए यहां आशीर्वाद लेने के लिए जाते हैं। इसके साथ ही वहां बने कुण्ड में लोग स्नान करते हैं क्योंकि इसी कुंड में भक्त प्रहलाद ने होलिका से निकलकर स्नान किया था। इतने वर्ष बीत जाने के बाद भी इस कुण्ड का पानी कभी नहीं सूखा।

होली की मसखरी, गाली और रोल्

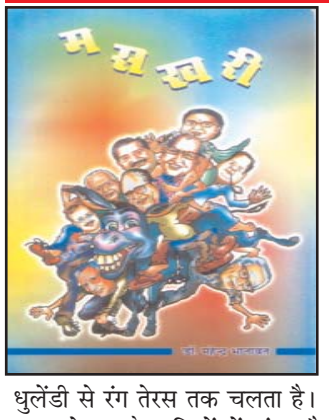

होली के एक रंग है। रंग के जितने रूप, भेद और प्रकार हैं उससे अधिक रूप में होली मनाई और गायी जाती है। होली पर तमाशा और रसिया गान होता है। फाग खेला और फाग गाया जाता है। गाली दी और गाली गायन भी होता है। यह हास्य व्यंग्य का सजीव पर्व है जो धुलेंडी से रंग तेरस तक चलता है।

मेवाड़ के मन्दिरों में चंग और हारमोनियम पर ब्रज के रसिया से साथ ही कन्हैया, राधा रानी और उसकी सखियों की स्मृति लिए गारी गीतों का गान होता है। ये पद बहुत रोचक रूप में आत्मिक सम्बन्धों की भावभूमि लिए लगते हैं।

होली की परम्परा बताने वाले कालादर्श आदि शास्त्रों में धूली वन्दन और अश्लील बोल की प्रथाएं रेखांकित की गई हैं। बलमा, लांगुरिया गीतों की तरह मेवाड़ में लालकेश्या के गीतों में ऐसे स्वर मिलते हैं। बनी ठनी का एक प्रसिद्ध गारी पद है -

होरी होरी कहि बोले सब ब्रज की नारि।
नन्द गाँव बरसानो हिलि मिलि गावत इत उत रस की गारि।।
उड़त गुलाल अरुण भयो अम्बर चलत रंग पिचकारि कि धारि।
रसिक बिहारी भानु-दुलारी नायक संग खेलें खेलवारि...।।

बहुत समय पहले होली की उपाधियां देने वाले पर्चे भी छापे जाते रहे। कभी दरबारियों को भी खरी खरी सुनाई जाती। कवियों और साहित्यकारों के समुदाय में ऐसे छंद लिखे जाते जो निशाने कहे जाते थे। मूर्ख सम्मेलन से ज्यादा निशाने प्रभावी रहे। फतहनगर में 'डुगडुगी' में होली की रंग भरी उपाधियां छापी जाती तो उदयपुर में मसखरी और रोलें उजागर की जाती।

यह गौरतलब है कि मसखरी रचना की एक परम्परा का निर्वाह प्रसिद्ध साहित्यकार नन्द चतुर्वेदी, डॉ. महेन्द्र भानावत और प्रो. भगवतीलाल व्यास की मंडली करती रही। शहर ही नहीं, मेवाड़ भर के लेखक, पत्रकार, इतिहासकार आदि पर व्यंग्य भरे छन्द लिखे जाते और उनका प्रकाशन करवाया जाता रहा। जब इसके 25 वर्ष हुए, तो पिछली सब ही मसखरियों का सुन्दर संकलन प्रकाशित किया गया। देश में इसे मैं अपनी तरह का एक मात्र संग्रह मानता हूं। प्रो. चतुर्वेदी और प्रो. व्यास के देहावसान के बाद डॉ. भानावत आज भी हर वर्ष होली की मसखरी लिखकर उस परम्परा को निरंतरता दिए हुए हैं।

सच में होली जैसा कोई पर्व कहां, यह विक्रम वर्ष का आखिरी दिन है और सब मनोमालिन्य घटाने और इसी अर्थ में उजले भाव का अवसर भी है -

बनि आयौरे रसिया होरी कौ।
मल्ल काछ शृंगार धरयौ है फैंटा शीश मरोरी कौ।
काँधे भीनीं उपरना सोहे माथे बैंदा रोरी कौ।
'पुरुषोत्तम' प्रभु कुँवर लाडिलौ यह रसिया वाही गोरी कौ।।

- डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू'

खुल्लम खुल्ला

(1)
महेन्द्रजी भानावत का लेखन भरा है ठूंस-ठूंस भंडार।
इतनी पुस्तकें लिखीं कि खुद बने भारतीय पुस्तक भंडार।।

(2)
डॉ. तुक्तक भानावत की शान से कायम प्राण-प्रतिष्ठा की रीत।
पत्रकारिता के साथ सामाजिक मंच पर पाई रिकॉर्ड जीत।।

-भूपेन्द्र चौबीसा

होली पर लालकेश्ये, ईलाईली और उघाड़ी गाळें

हर त्यौहार के अपने रंग होते हैं पर होली के रंग तो कई हैं। यह सर्वाधिक अंग-रंग, राग-फाग, हास्य-विनोद, ठिठोली-हमझोली का त्यौहार है। पूरा फाल्गुन का महीना ही बड़ा रसीला है। रसियों की टोली चंग के, फागण के मदछके गीत गाती घर-घर पहुंचती है। सब ओर फूट पड़ती है फागुणी बयार। मस्ती सब ओर है। चंग की तरंग में कोई डावड़ी अपने परण्ये को नूत रही है-

फागण म्हीनो आयो म्हारो
परण्यो क्यूं नी आयो रे
बणठण बैठी डावड़ी
टाबरियो जायो रे
ढूंढ़ौ होली नै
हां हां ढूंढ़ौ होली नै
काजल कंकू गुलाल रोली नै
ढूंढ़ौ होली नै।

अर्थात् फाल्गुन का महीना आ गया है किन्तु मेरा पति क्यों नहीं आया। बनीठनी डावड़ी ने पुत्र रत्न दिया है। होली पर उसकी ढूंढ करवानी है। काजल, कुम्कुम और रोली से होली को पूजना है। कोई अपने प्रेमी को हेला दे रहा है-

आज तो अधरात नै
तूं वड़ला हेठे आजै रे
नीतर थारी मावड़ी
री कूंख लाजै रे
असली बाप रो
हां हां असली बाप रो
जायो व्है म्हांसूं हेत पाजै रे
असली बाप रो।

अर्थात् आज अर्द्धरात्रि को तू वटवृक्ष के नीचे आ जाना नहीं तो तू अपनी मां की कोख का लज्जित करेगा। तू यदि असली पिता का पुत्र होगा तो अवश्य मुझसे आकर प्रेमाचार करेगा।

चंग सबको चंगा रंगा कर देता है। उसकी घमरोड़ी में सब अपना-अपना काम भूल उसके पीछे लग पड़ती हैं। कोई पदड़क्ये घूंघट की ओट में पट-पोट खोले कई तरह के नजराणे देती हैं तब कई तरह की ग्रंथियां, कुंठाएं और वर्जनाएं खुल पड़ती हैं। कैसे-कैसे गीत बोल फूट पड़ते हैं, कल्पना तक नहीं की जा सकती। व्यंग्य विनोद के कई बांध टूट पड़ते हैं। शील-अश्लील के सारे समन्दर अथाह थाह में डूबे इतराते नहीं थकते हैं। साहित्य की कैसी सर्जना है जब सारा समूह रचनाकार की भूमिका में अल्हड़-तल्हड़ हो उठता है। कितने अर्थ देते हैं ये फड़के! जीवनचक्र की कितनी चकरियां ओरेदोरे अपनी जवान जवानी की हूंस बिखेरेते हैं! सीधी-सादी बात में कितना अंटदार कथन है-

धोती मांई लांग है
तो घाघरा में नाड़ो रे
खदबद बोले राबड़ी
गायां में पाड़ो रे
जमानो बोदो रे
अखन कंवारी ले भागो जवान जोधो रे
जमानो बोदो रे।

अर्थात् धोती में लंगी है और घाघरे में नाड़ा। राबड़ी खदबद हो पक रही है। गायों में बैल की बजाय पाड़ा इतरा रहा है। समय बड़ा खराब है। अखंड कुंवारी को जवान जोधा भगाकर ले गया है।

ऐसे एक नहीं, अनेक लालकेश्ये न जाने कितने पड़ों-प्रतीकों के माध्यम से वातावरण को वत्सल किये रहते हैं। होली तभी आती है। होली से जुड़े कितने ही पौराणिक आख्यान, ऐतिहासिक प्रवाद और लोकजीवन के घटनाचक्र हैं। जलना प्रहलाद को था पर जल गई होली। उसके पूरे शरीर पर फफोले फूट पड़े। उन्हीं फफोलों का प्रतीक होलीवृक्ष, होलिका की याद में जगह-जगह खड़ा किया जाता है और घास-फूस का आवरण दे जलाया जाता है। होलिका हर साल जलती है।

होली पर हाथों में छड़ियां, डंडियां लिए समूह रूप में मंदिर चौराहों पर रात-रात भर गैरें खेली जाती हैं। ढोल के ढमाकों पर न्यारी-न्यारी तालों चालों तथा घेरों की गैरों का रंग ऐसा जमता है कि जमा ही रहता है। गैरें उठती बैठती गम्मत खाती। विविध स्वांगों की रंगराती गैरें। आदिवासियों की गैरों में आदिम गंध का अनुष्ठान। सब ओर की न्यारी-न्यारी फटाकेदार गैरें। सबके अपने ठाठ-ठसक। गैरों में गीतों के साथ गालियों का आनन्द और मस्ती।

उदयपुर के मेनार गांव में मेनारिया ब्राह्मणों की तलवारों की जंगी गैर इतिहास के ठेठपन को चरितार्थ करता शूरवीरों का अजेय घोष है। कहा जाता है कि मुगलों के अधीन 52 थाने थे जिनसे मुक्ति पाने का जिम्मा चूण्डावत जेतसिंह ने वल्लभनगर (पूर्व नाम ऊंठाला) में सबसे पहले किले में अपना सिर पहुंचाकर लिया। दूसरा थाना मेनार का था जहां मेनारियों ने अपने पराक्रम और बुद्धि कौशल से मुगलों का नाश किया। इसी खुशी में तलवारों की गैर का आयोजन होता आ रहा है। महाराणा अमरसिंह के समय की यह घटना सन् 1599 के आसपास की है।

चित्तौड़ वाली बसी का बारूद की भूंगलियों का खेल बांके बिरलों का ही था। आमने सामने दो दल। प्रत्येक खेल्ये का शरीर काली मिट्टी के लेप दिए तप्पड़ से ढका रहता। फिर भूंगलियों से भभका दिया जाता। आग के तीर और गोले निकलते। हजार सावधानी बरतने पर भी शरीर झुलसे बिना नहीं रहता। एक खेल्ये को तो इस खेल में अपने प्राण तक देने पड़े तब से यह खेल केवल याद बना हुआ है। खेल की यह परम्परा 900 वर्ष पुरानी कही जाती है।

उदयपुर के बद्दू भगतण के दरवाजे से सांडी मुसलमानों की ढोला-मारू की सवारी का रंग लोग आज भी भूले नहीं हैं। यहां के तेलियों की डाकी की सवारी भी कभी बड़ा उमड़ाव देती थी।

भीलवाड़ा जिले के माण्डल गांव का नारों का स्वांग लगभग पौने चार सौ वर्ष पुराना इतिहास जीवित किये है। नार चार होते हैं जो आदमी बनते हैं। इनके माथे सिंग होते हैं। सन् 1614 की यह घटना चैत्र कृष्णा तेरस को प्रतिवर्ष दुहराई जाती है। प्रसिद्धि है कि जब मुगल बादशाह शाहजहां उदयपुर से दिल्ली लौट रहा था तब एक रात यहां पड़ाव किया था। बादशाह के मनोरंजन के लिए यह अजूबा स्वांग लाया गया था जो आज भी अजूबा बना हुआ है।

वनवासियों की गैर ही अनोखी नहीं, नेजा भी अनोखा होता है। जितनी औरतें होती हैं उतने वृक्ष पर गोटे बांध दिये जाते हैं। वृक्ष के चारों ओर बेंत लिए घेरेबंद खड़ी हो जाती हैं महिलाएं, फिर पुरूष उनका घेरा तोड़ वृक्ष पर चढ़ने का साहस करते हैं।

महिलाएं बेंतों से उनका डील खोल देती हैं पर मरद उनके आगे कैसे हार मानलें! निजा का एक रूप वाना गांव में चारभुजा मंदिर की गली में मेनारिया महिलाओं द्वारा हाथों में आग की डालियां लिए देखा जाता है। इनके बीच भील युवकों का समूह दौड़ता हुआ आता है तब महिलाएं अपनी डालियों से जोरदार पिटाई करती देखी जाती हैं।

होली पर मेवाड़ के गड़बोर में जो मेला भरता है, उसके लिए प्रसिद्धि है कि कभी यहां पांडवों ने गैर खेली थी। वृत्ताकार नृत्य में हाथों में छड़ियां, लम्बे डंडे, कामड़ियां लेकर जो नृत्य किया जाता है वह गैर कहलाता है। नृत्य में प्रयुक्त डंडे खांडे नाम से जाने जाते हैं। कहीं-कहीं छड़ियां लहरदार होती हैं। नाथद्वारा में शीतला सप्तमी से पूरे माह तक गैर का आयोजन रहता है। पहली गैर श्रीनाथजी को समर्पित होती है जो चौपाटी पर खेली जाती है।

होली के दूसरे दिन ईलोजी के सम्मुख नृत्य किया जाता है। कहीं-कहीं ईला-ईली की स्थापना देखने को मिलती है। कहते हैं ईलोजी हिरण्यकश्यप के बहनोई थे। ये जब उसकी बहिन ईली को ब्याहने आये उससे पूर्व ही ईली अर्थात होलिका प्रहलाद को गोद में ले अग्नि भेंट हो गई। प्रहलाद बच गया किन्तु होलिका के नहीं रहने पर ईलोजी सुधबुधहीन हो गये और सदैव के लिए कुंवारे रहे।

मेवाड़ के आमेट, वल्लभनगर, सनवाड़, कोशीथल, आदि कई स्थानों पर ईलोजी के चबूतरे, चीरे और स्थानक हैं। देवगढ़ में ईला-ईली की बड़ी मजेदार सवारी निकाली जाती है। निपूती औरतें रात्रि को नग्नावस्था में ईलोजी के धोक लगती हैं और तीन-चार बार घोल घाई लेती हैं। इससे अगले वर्ष तक वे मां बन जाती हैं। होली के प्रमुख वाद्यों में चंग, ढोल, ढोलक, मादल, ढफ, मजीरा आदि हैं। - **म.भा.**

पोथीखाना

फूलों के गुलदस्ते से 'मन में उठते प्रश्न'

डॉ. जयप्रकाश भाटी 'नीरव' का नवीनतम प्रकाशन 'मन में उठते प्रश्न' मेरे समक्ष है। य उनकी 14वीं कृति है। वे 64 वर्षों से साहित्य सृजन में संलग्न हैं। उन्होंने सन् 1960 से कविताओं के माध्यम से साहित्य क्षेत्र में प्रवेश किया। डॉ. भाटी मूलतः कवि हैं लेकिन हिन्दी की विभिन्न विधाओं में भी उनकी कलम चलती रही है। समीक्षा, नाट्य, आलोचना, शोध, विवेचना आदि में भी वे सक्रिय हैं।

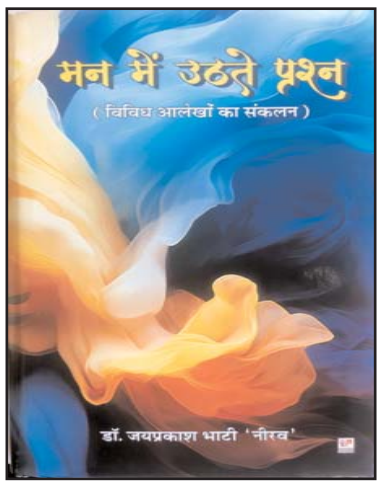

मन का आयाम विस्तृत है। मन भावनाओं, मनोभावों, मनोविकारों से सम्पृक्त है। मन के दो पक्ष बताये जाते हैं- चेतन व अचेतन। ये दोनों सक्रिय रहते हैं। मन बड़ा चंचल होता है। अनेक प्रश्न व्यक्ति के मन में सागर से हिलारें लेते रहते हैं। वह उन प्रश्नों को लेकर विचार करता है और उसे अपनी शैली में प्रकट करता है। जैसा कि लेखक का मानना है, ''एक जेनुइन लेखक के लिए बेचैनी बहुत जरूरी है। हम जिस क्रूर समाज में रह रहे हैं वह विसंगतियों और दुर्घटनाओं से भरा है। यर्थाथ अप्रत्याशित रूप से घटित हो रहा है। वह हमारी कल्पनाओं से परे है। हमें उस समाज और समय की जानकारी होनी चाहिये जिसमें हम रह रहे हैं।'' ऐसे ही समय 'मन में उठते प्रश्न' को डॉ. भाटी ने इस कृति में स्थान दिया है।

'मन में उठते प्रश्न' कृति की रचनाओं को तीन खण्डों में विभाजित किया है यथा व्यक्तित्व, भाषा और साहित्य तथा चिन्तन। अलग-अलग समय में और अलग-अलग पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित ये रचनाएं अलग ही स्वरों में ध्वनित हैं। व्यक्तित्व खण्ड में 7 लेख हैं। मेवाड़ की दार्शनिक महात्मा (संत) भूरीबाई एक अति सामान्य परिवार में पैदा हुई और निरक्षर थीं। बेमेल और बाल्यकाल में विवाह तथा विधवा भूरीबाई भक्ति भावना में लीन हो गई। वे अपने आन्तरिक अद्वैत ज्ञान से समाज को प्रभावित करने लगी। उनके भक्त बनते गए। चुप (मौन) रहो और मन में ईश्वर का भजन करो। आचार्य रजनीश (ओशो) उनसे भेंट करने आए। उनके व्यक्तित्व को सुनकर।

इसी प्रकार अनेक दार्शनिक आए। उन्होंने मन को वश में करने की साधना की। आज भी नाथद्वारा में उनके छोटे से आश्रम पर सत्संग होता है। इसी भाग में सुप्रसिद्ध साहित्यकार नन्द चतुर्वेदी, घनश्याम शलभ, मंगल सक्सेना, डॉ. पूनम दईया, बच्चन, महाराणा मेवाड़ पर कलम चलाई गई है।

द्वितीय भाग में 10 रचनाएं हैं। सभी अलग-अलग तेवर की हैं। तुलसीदास, कालिदास और बच्चन पर चर्चा है तो स्विटजरलैण्ड और पोर्ट ब्लेयर- अण्डमान निकोबार में की गई यात्रा का संस्मरण है। गांव-गांव में ज्ञान ज्योति गीति-नाट्य भी यहां हैं। राष्ट्रभाषा और हमारा दृढ़ संकल्प तथा गीत एवं कविता पर विचार-विमर्श भी प्रस्तुत किया गया है।

तृतीय भाग 'चिन्तन' में 11 रचनाएं हैं। दीपावली, होली, रामकथा, इफ्तारनामा पर विचार-मंथन किया गया है। इस भाग की एक महत्त्वपूर्ण रचना 'अकेला चल' है। लेख का प्रारम्भ ही कन्फ्यूशियस के कथन से है- ''महान व्यक्ति जो चीज ढूंढ़ते हैं वह अपने अन्दर ही उन्हें प्राप्त हो जाती है जबकि कमजोर दूसरों का मुंह ताका करते हैं। यह सत्य है कि संघर्ष अकेले करना पड़ता है। आत्मनिर्भर सर्वत्र पूजा जाता है। संसार में सर्वोत्तम शिक्षा व्यक्ति संघर्ष करते प्राप्त करता है। अकेलेपन से भयभीत होने की आवश्यकता नहीं है। महान व्यक्ति सदैव अकेले चले हैं और उन्होंने अपने साहस, हौंसले, संघर्ष से अग्रणी भूमिका निभाई है।''

इस प्रकाशन में एक महत्त्वपूर्ण चिन्तनपरक लेख 'वेदों का रहस्य' भी है। वेदों पर हमारे यहां विपुल साहित्य सृजन हुआ है। वेदों का रहस्य समझना बड़ा क्लिष्ट है। उपनिषद, मीमांसा, आख्यान, संहिताएं, भाष्य, टिप्पणियां बहुत लिखी गई हैं और निरन्तर सृजन को प्रेरित करती हैं। डॉ. भाटी ने भी इस सम्बन्ध में अपनी लेखनी चलाई। प्रकृति और पुरुष, शरीर और आत्मा इन दोनों में अत्यन्त भेद है। भगवान की माया त्रिगुणात्मक है। वही अपने सत्व, रज और तम गुणों से अनेक प्रकार की भेद वृत्तियां पैदा करती है। इनका विस्तार असीम है। फिर भी इस विकारात्मक सृष्टि को तीन भागों में बांटा जा सकता है- अध्यात्म, अधिदेव, अधिभूत। आत्मज्ञान स्वरूप है। उसका इन पदार्थों से कोई सम्बन्ध नहीं है।

भगवान एक ही है और जो उनके अनेकों रूप है वह केवल मायामय है। जो इस भेद को समझ लेता है, वही वेदों का रहस्य समझ सकता है। यह इस लेख का सार कहा जा सकता है।

जैसा कि हम देखते हैं, यह कृति विभिन्न रचनाओं का संग्रह है और एक दूसरी रचना से परस्पर कोई सम्बन्ध नहीं है। समय-समय पर उठे प्रश्नों का उत्तर ही है। जैसा पहले लिखा जा चुका है, डॉ. भाटी मूलतः कवि हैं और वह भी रोमांटिक कवि। उनकी यह छाया इन लेखों, रचनाओं में बराबर दिखाई देती है। वे सरल, सहज भावाभिव्यक्ति के रचनाकार हैं। यह प्रसन्नता की बात है कि वे निरन्तर साहित्य-साधना में लीन हैं और नीरस वातावरण में रहते हुए भी 'नीरव' सक्रिय रूप से लिख रहे हैं। जहां तक रचनाओं की भाषा-शैली है वह उसके अनुरूप है। पुस्तक का मुद्रण सुन्दर तथा आवरण आकर्षक मनभावन है। उसके लिए प्रकाशक बधाई के पात्र हैं।

'मन में उठते प्रश्न' विविध सुगंधित फूलों का एक शानदार गुलदस्ता है। हिमांशु पब्लिकेशन्स, उदयपुर से प्रकाशित 166 पृष्ठीय यह कृति 995 रूपये की है। लगता है, इसका प्रकाशन मुख्यतः पुस्तकालयों के लिए है।

- **डॉ. लक्ष्मीनारायण नंदवाना**

ये शहर गाँव होना चाहता है

शहरीकरण से परेशान आदमी की व्यथा को कवयित्री प्रतिमासिंह ने अपनी कविता 'ये शहर गाँव होना चाहता है' में बखूबी व्यक्त किया है। एक कविता में उन्होंने छोटे शहर को बड़े शहर की झूठन करार दिया है । शहर के आदमी के डर को कवियित्री ने इस तरह व्यक्त किया है कि वे गरीब पिछड़ों के किताब पढ़ने से इसलिए डरते हैं क्योंकि अगर वह पढ़ लिख गये तो एक दिन जमादार कहार घांस काटने वाले सभी उससे छिन जाएंगे और उसे खुद काम करना पड़ेगा। कवियित्री ने अपने सफ़र की सफलता के पीछे माँ का हाथ बताया है लेकिन खुद और अपनी बहन के पैदा होने की माँ की नाखुशी को व्यक्त करने से भी नहीं चूकीं।

एक कविता में वह कहतीं हैं कि बुरे आदमी को भी एक ऐसा आदमी अच्छा लगता है जो उसे बिना आईना दिखाये बता दें कि दुनिया कितनी बुरी हो गयी है और वह अब भी बाक़ी है। एक पत्रकार की बेटी प्रतिमा सिंह का बोरसी के नाम से यह पहला कविता संग्रह है लेकिन उनकी कविताओं को पढ़कर लगता है कि ज़िंदगी के यथार्थ को उन्होने बहुत अच्छी तरह से समझा हैं और कविता में व्यक्त किया है। बोरसी का अर्थ समझाते कवयित्री ने बताया कि कच्ची मिट्टी का एक ढांचा जिसमें ज़्यादा देर तक आग रहती है और उसकी राख होने का समय बढ़ जाता है। पहले के लोग जिनके घरों में आग नहीं होती थी उसे ले जाकर अपने चूल्हे की आग को जलाते थे। कवयित्री का कहना है कि ये कवितायें वो विचार हैं जिन्हें राख होने से पहले मैंने बचा लिया। वो वर्जनाएं हैं जिन्हें नीति में बदलने से पहले तोड़ दिया। मुंबई के स्टोरी मिडल इंफोटेक प्राइवेट लिमिटेड ने एक कविता संग्रह को प्रकाशित किया है जिसमें एक सौ कविताओं का गुलदस्ता हैं।

- **सुरेश पारीक**

बाजार / समाचार

होली पर्व धूमधाम से मनाया

उदयपुर (ह. सं.)। होली हेलमेल का, भाईचारे का, प्रेमभाव का त्यौहार है। आपसी द्वेष, ईर्ष्या तथा कलुष मेटकर रंग बांटकर खुशियां मनाने का त्यौहार है। इसी के तहत आर्ची आर्केड रेजिडेंशियल वैलफेयर सोसायटी, वृंद्धावन धाम गली नं. 3, आर्बिट-1 तथा ड्रीम डिजाइनर के संयुक्त तत्वावधान में होली समारोह धूमधाम से मनाया गया। इसमें 300 से अधिक लोगों ने शिरकत की।

पं. गोपालकृष्ण द्विवेदी के सान्निध्य में फाल्गुन शुक्ल पूर्णिमा को प्रदोष काल में मंत्रोच्चार और विधि विधान से होलिका पूजन कर होलिका दहन किया गया। पूजन के यजमान डॉ तुक्तक-रंजना भानावत एवं अनिल-सुषमा कटारिया थे। इस अवसर पर आर्ची आर्केड, द ऑर्बिट एवं ड्रीम डिज़ायनर सोसाइटी की महिला सदस्यों ने आकर्षक रंगोली बनाकर होलिका का शृंगार किया। अगले दिन सभी ने धुलेण्डी पर्व हर्षोल्लास के साथ मनाया।

राजस्थान में 79 भाषाएं और 138 बोलियां

राजस्थान में 79 भाषाएं और 138 मातृभाषाएं बोली जाती हैं। आज प्रदेश में सात करोड़ 70 लाख हिन्दीभाषी और 2 करोड़ 68 लाख से ज्यादा लोग राजस्थानी भाषी हैं। हिन्दी भाषियों में दो करोड़ 26 लाख लोग ही ऐसे हैं जो इसे मातृभाषा मानते हैं जबकि राजस्थान की विभन्न बोलियों को मिला लें तो प्रदेश में राजस्थानी भाषी 3 करोड़ 82 लाख से अधिक हो जाते हैं। राजस्थानी को मातृभाषा के रूप में देश में बोलने वाले दो करोड़ 76 लाख हो गए हैं।

प्रदेश में बोली जाने वाली मातृभाषाओं के रूप में जनगणना विभाग की सूची में मारवाड़ी, मेवाड़ी, वागड़ी, हाड़ौती, ढूंढ़ाड़ी, बागड़ी राजस्थानी, पंजाबी, उर्दू, ब्रज, मालवी, सिंधी तथा मेवाती हैं। जनगणना विभाग ने 15 साल पहले उस समय बोली जाने वाली भाषाओं का पता लगाया तो प्रदेश में हिन्दी और राजस्थानी के साथ पंजाबी, सिंधी, गुजराती, बंगाली, मळयाळम, मराठी, उड़िया, तमिल, नेपाली, तेलगू और मैथिली भाषाएं भी बोली जाती थीं।

- दै. नवज्योति, 21 फरवरी 2024 से साभार

एचडीएफसी बैंक और टीडी बैंक में गठबंधन

उदयपुर (ह. सं.)। एचडीएफसी बैंक और टीडी बैंक ग्रुप (टीडी) ने कनाडा में पढ़ाई करने की योजना बना रहे भारतीय छात्रों को हर संभव सहायता प्रदान करने के लिए एक विस्तृत संबंध की घोषणा की।

इस समझौते के साथ, टीडी और एचडीएफसी बैंक एक नए रेफरल प्रोग्राम की घोषणा कर रहे हैं। एचडीएफसी बैंक कनाडा में पढ़ाई करने की योजना बना रहे छात्रों को टीडी इंटरनेशनल स्टूडेंट जीआईसी प्रोग्राम में रेफर करेगा। ये प्रोग्राम छात्रों को कनाडा सरकार के स्टूडेंट डायरेक्ट स्ट्रीम (एसडीएस) स्टडी परमिट रूट का आसानी से पालन करने में सक्षम बनाता है। यह रेफरल पार्टनरशिप दोनों बैंकों के मौजूदा संबंधों पर आधारित है, जहां टीडी ने 2015 से कनाडियन डॉलर क्लियरिंग के लिए एचडीएफसी बैंक के मुख्य कॉरेस्पोंडेंट बैंकिंग पार्टनर के रूप में काम किया है। एक तेजी से प्राप्त होने वाले स्टडी परमिट के लिए आवेदन करने के लिए कनाडियन सरकार की आवश्यकताओं के हिस्से के रूप में, छात्रों को वित्तीय सहायता का प्रमाण प्रदान करना आवश्यक है, जो एक पार्टनर कनाडियन फाइनेंशियल इंस्टीट्यूशन से गारंटीड इनवेस्टमेंट सर्टीफकेट (जीआईसी) के माध्यम से पूरा किया जाता है। टीडी इंटरनेशनल स्टूडेंट जीआईसी प्रोग्राम छात्रों को डिजिटल रूप से अकाउंट खोलने और उन्हें अपने स्टडी वीजा और रहने की लिए जरूरी खर्च आवश्यकताओं को पूरा करने में मदद करने के लिए डिज़ाइन किया गया है।

हिन्दी-ब्रजभाषा के उत्थान पर सार्थक चर्चा

हिन्दी भाषा-साहित्य के विकास के साथ-साथ ब्रजभाषा के उत्थान, उन्नयन एवं संवर्धन के लिए समर्पित साहित्य मण्डल श्रीनाथद्वारा विगत आठ दशक से निरन्तर प्रयासरत है। संस्था के प्रधान मंत्री श्यामप्रकाश देवपुरा अपने सीमित साधनों में संस्था की वार्षिक गतिविधियों का संचालन कर अपने स्वर्गीय पिता भगवतीप्रसाद देवपुराजी द्वारा भाषा और साहित्य के संवर्धन के लिए स्थापित परम्पराओं को निरंतर बनाए रख कर संस्था की गरिमा को बनाए हुए हैं।

हाल ही में विगत 3 एवं 4 मार्च को मण्डल द्वारा दो दिवसीय पाटोत्सव ब्रजभाषा समारोह का आयोजन परम्परा का यादगार उत्सव बन गया। प्रथम दिवस के प्रथम सत्र में विशिष्ट प्रतिभा एवं विद्यार्थी रत्न सम्मान का आयोजन भगवती प्रसाद देवपुरा प्रेक्षागार में आयोजित किया गया। मुख्य अतिथि साहित्य मण्डल श्रीनाथद्वारा के अध्यक्ष एवं भागवत प्रवक्ता मदनमोहन शर्मा ने अपने उद्बोधन में प्रतिभावान एवं मेधावी छात्र-छात्राओं को सम्बोधित करते हुए का कहा कि जीवन में कुछ प्राप्त करने के लिए बहुत कुछ खोना पड़ता है। जैसे एक बीज अपने सुंदर जीवन को एक सड़ी गली भूमि में समाहित कर लेता है एवं उसमें सड़कर एक वृक्ष के रूप में संवर जाता है। उन्होंने कहा कि जिसने एक लक्ष्य का संधान किया है आज वही सफल हुआ है।

कार्यक्रम की अध्यक्षता करते हुए समाजसेवी जितेन्द्रसिंह सनाढ्य ने कहा कि साहित्य मण्डल सदैव ही मनीषियों और प्रतिभाओं का सम्मान करता आया है। विशिष्ट अतिथि के रूप में जाने-माने साहित्यकार डॉ जयप्रकाश शाकद्विपीय, ब्रजभाषा के कवि श्री हरि ओम हरि, पत्रकार उमादत्त शर्मा एवं साहित्यकार राजमल जी परिहार रहे। इस अवसर पर देश के विभिन्न अंचलों से पधारे विविध साहित्यकारों को भिन्न-भिन्न उपाधियों से सम्मानित किया गया।

राव महेंद्र मानसिंह स्मृति सम्मान से डॉ. रामानंद शर्मा, राजमाता मीरा मानसिंह स्मृति सम्मान से प्रेमा भुवन, रविन्द्रनाथ महर्षि स्मृति सम्मान से वसंत जमशेदपुर, श्यामलाल शर्मा स्मृति सम्मान नरेंद्रकुमार मेहता, गोपेंद्रनाथ शर्मा स्मृति सम्मान से किशोर शर्मा सारस्वत, गोपीलाल दुग्गल स्मृति सम्मान से कवि शंकर द्विवेदी, कंचन देवी दुग्गल स्मृति सम्मान से डॉ. वर्षा एच. पटेल, मातुश्री विद्या देवी स्मृति सम्मान से डॉ करतार सिंह जाखड़, डॉ. के. आर. कल्याण रमन स्मृति सम्मान से डॉ. इंद्र सेंगर को सम्मानित एवं हिंदी साहित्य शिरोमणि की मानद उपाधि से समलंकृत किया गया। इसके अलावा सम्पादन, ब्रज संस्कृति के उन्नयन के क्षेत्र के विशिष्टों को भी सम्मानित किया गया। रात्रि को ब्रजभाषा कविसम्मेलन का ठाठ रहा।

-प्रस्तुति :
डॉ. प्रभातकुमार सिंघल

'इतिहास लेखन में ओझा की अहम भूमिका रही'
अजमेर संग्रहालय का नाम इतिहासकार ओझा के नाम पर हो

उदयपुर (ह. सं.)। मेवाड़ के प्रसिद्ध इतिहासकार डॉ. गौरीशंकर हीराचंद ओझा का योगदान भारतीय लिपि, धर्म, संस्कृति और पुरातत्व में अपूर्व और अद्वितीय रहा है। स्थानीय स्त्रोतों के वास्तविक उपयोग की जो विधि उन्होंने दी, वह देश-विदेश के इतिहासकारों के लिए बहुत उपयोग की हैं। ये विचार डॉ. ओझा का भारतीय इतिहास लेखन में योगदान विषयक राष्ट्रीय संगोष्ठी में इतिहासकारों ने प्रकट किए।

सिरोही के एसपी कॉलेज में भारतीय इतिहास अनुसंधान परिषद के सहयोग से आयोजित इस संगोष्ठी में डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू' ने ओझा के ग्रंथों को मूल्यवान बताते हुए आज भी अधिक बिकने वाला कहा। उनका मत था कि 1894 में लिपि की भारतीय धारणा को जैसा उन्होंने लिखा, 1919 में हड़प्पा की खोज के बाद से उसकी निरंतर पुष्टि होती चली गई। उन्होंने शिलालेख और सिक्कों के अध्ययन की जिस परम्परा का विकास किया, वह आज तक प्रासंगिक है। जब-जब भी भारतीय इतिहास पर कार्य होगा, ओझा बराबर याद किए जाते रहेंगे। उन्होंने राजस्थान को सच्चे अर्थों में सम्मान दिलाया।

इतिहासकार डॉ. चंद्रशेखर शर्मा ने डॉ. ओझा के लेखन के तीन सूत्र बताए - सत्य, तथ्य और प्रिय कथ्य। आज भी इतिहासकारों को उनकी पुस्तकों तथा शोधों को ध्यान में रखना चाहिए। ओझा ने अपने इतिहास लेखन में हिन्द और हिन्दी को रेखांकित कर भारतीय राष्ट्रीय जागरण का शंखनाद किया।

राजस्थान विद्यापीठ के डॉ. जीवनसिंह खरकवाल ने राज्य में 120 स्थानों पर आहड़ संस्कृति के मिलने की जानकारी दी और कहा कि अरावली की पहाड़ियों में मानव और उसके संसाधनों के प्रारंभिक प्रमाण मिलते हैं। कानोड़ के इतिहासकार डॉ. जे. के. ओझा और डॉ. प्रियदर्शी ओझा ने इतिहास लेखन की विशेषताओं पर प्रकाश डाला। डॉ. मनीष श्रीमाली ने ओझा के इतिहास दर्शन को विवेचित किया।

प्रारम्भ में सुखाड़िया विश्वविद्यालय की पूर्व विभागाध्यक्ष प्रो. मीना गौड़ ने गौरीशंकर हीराचंद ओझा की पुस्तकों को अतीव महत्वपूर्ण बताया। कॉलेज प्राचार्य वी. के. त्रिवेदी और प्रशासक आशुतोष पटनी ने सभी इतिहासकारों, शोधार्थियों का स्वागत किया और आयोजन के उद्देश्यों पर प्रकाश डाला।

ओसवाल सभा महिला प्रकोष्ठ का होली मिलन

उदयपुर (ह. सं.)। ओसवाल सभा महिला प्रकोष्ठ का होली मिलन समारोह महावीर साधना एवं स्वाध्याय भवन अंबामाता में सम्पन्न हुआ। कार्यक्रम की शुरुआत परिधि कोठारी की गणेश वंदना से हुई। ओसवाल सभा की सदस्याओं ने सोलो, ग्रुप नृत्य और लघुनाटिका की रंगारंग प्रस्तुतियां दी। सभी प्रतिभागियों को पारितोषिक प्रदान किया गया। पारितोषिक की प्रायोजक पिस्ता हड़पावत थी।

कार्यक्रम संयोजक ओर प्रायोजक साधना मोगरा, संगीता जारोली थी। मुख्य अतिथि समाजसेवी मीनल जैन थी। अध्यक्ष किरण पोखरना ने सभी का स्वागत किया। संरक्षक रेखा भाणावत ने गीत की प्रस्तुति दी। सभी सदस्यों द्वारा होली पर तंबोला गेम भी खेला गया। सचिव वंदना बाबेल ने आभार व्यक्त किया। कार्यक्रम का संचालन डॉ प्रमिला जैन ने किया। इस अवसर पर ओसवाल सभा महिला प्रकोष्ठ की संरक्षिका उमा कोठारी, सुमन कोठारी, अनीता गांधी, गरिमा धींग, मनीषा बम, स्नेहलता कंठालिया, ममता बंबोरिया, आशा मेहता, कोमल दक, अनीता भाणावत, साधना मेहता, लक्ष्मी कोठारी, शिल्पा पोखरना सहित कार्यकारिणी की 120 सदस्याएं उपस्थित थी।

किट्टी पार्टी का शुभारंभ

उदयपुर (ह. सं.)। 18 मार्च 2024 को रंजना भानावत ने अपने निवास 'शब्दार्थ' पर होलिकोत्सव के शुभ अवसर पर महावीर युवा मंच की सदस्यों के साथ किट्टी पार्टी का शुभारंभ किया जिसमें कविता मुणेत, राखी सरूपरिया, रंजना भानावत, मंजुला सिंघवी, उर्मिला भण्डारी, रानू भाणावत, नीता खोखावत, ऋतु सिंघवी, प्रेरणा जैन, सपना चित्तौड़ा एवं मधु सुराणा ने सोत्साह भाग लिया।

एचडीएफसी बैंक के 60 बैंकिंग आउटलेट का उद्घाटन

उदयपुर (ह. सं.)। एचडीएफसी बैंक ने पूरे भारत में आरबीआई द्वारा अधिसूचित अनबैंक्ड रूरल सेंटर्स (यूआरसी) में 60 बिजनेस कॉरेस्पोंडेंट (बीसी) बैंकिंग आउटलेट्स शुरू करने की घोषणा की।

ये नए आउटलेट अब एचडीएफसी बैंक की यूआरसी नेटवर्क उपस्थिति को 5,020 आउटलेट्स तक बढ़ा देते हैं। गौरतलब है कि बैंक का 34 प्रतिशत बीसी एजेंट नेटवर्क अब 10,602 गांवों में फॉर्मल फाइनेंशियल प्रोडक्ट और सर्विसेस देने का करने का काम करता है। यह पहल सीएससी ई-गवर्मेंट के सहयोग से की गई थी। यह सूक्ष्म-उद्यमियों के रूप में कार्य करने वाले विलेज लेवल आंत्रपेन्योर (वीएलई) को भौतिक केंद्रों के माध्यम से सीधे अंतिम छोर तक आवश्यक बैंकिंग सेवाएं पहुंचाने में मदद करेगा और वंचित क्षेत्रों में समुदायों को सशक्त बनाएगा।

हम उन उपकरणों का प्रयोग करें जो कम से कम ऊर्जा की खपत करें : प्रो. चेतनसिंह

उदयपुर (ह. सं.)। एक बार उत्सर्जित कार्बन दुनिया में 300 वर्षों तक रहता है और मानव जीवन को दूषित करता रहता है। उत्सर्जित कार्बन पूरी दुनिया में फैलता है, किसी एक देश में नहीं। अत: यह हमारा दायित्व है कि हम उन उपकरणों का प्रयोग करें जो कम से कम ऊर्जा की खपत करें। ये विचार जनार्दनराय नागर राजस्थान विद्यापीठ में ऊर्जा स्वराज यात्रा के दौरान सोलरमैन ऑफ इंडिया के नाम से विख्यात प्रो. चेतनसिंह सोलंकी ने व्यक्त किये। उन्होंने कहा कि धरती पर तापमान में 1.3 डिग्री की बढ़ोतरी हो चुकी है और 1.5 से 2 डिग्री का परिवर्तन लक्ष्मण रेखा है।

कुलपति कर्नल प्रो. एस. एस. सारंगदेवोत ने कहा कि विद्यार्थी ऊर्जा सरंक्षण के कार्य अपने घर से करें। पचपन हजार किलोमीटर की यात्रा कर चुके प्रो. सोलंकी ने एक सोलर बस का निर्माण किया है, जिसमें वे स्वयं रहते भी हैं।

डॉ. चंद्रेश छतलानी ने बताया कि विद्यापीठ दो वर्षों से प्रो. सोलंकी के ऊर्जा स्वराज मिशन से जुड़ा है। इसमें बारह सौ से अधिक विद्यार्थियों व कार्यकर्ताओं ने पंजीकरण किया है। प्रारम्भ में अधिष्ठाता प्रो. मंजू मांडोत ने सभी का स्वागत किया। डॉ. भारतसिंह देवड़ा ने आभार जताया। कार्यक्रम में डॉ. मनीष श्रीमाली, डॉ. यज्ञ आमेटा, डॉ. गौरव गर्ग, डॉ. दिलीप चौधरी, डॉ. भरत सुखवाल, डॉ. ललित सालवी, विकास डांगी सहित विद्यार्थी व कार्यकर्ता उपस्थित थे।

आईआईएचएम के प्रशिक्षण केंद्र का शुभारंभ

उदयपुर (ह. सं.)। पर्यटन एवं आतिथ्य कौशल परिषद (टीएचएससी) से संबद्ध भारत के सबसे बड़े प्रशिक्षण केंद्र आईआईएचएम इंस्टीट्यूट ऑफ हॉस्पिटैलिटी स्किल्स (आईआईएचएस) ने उदयपुर में अपनी अत्याधुनिक सुविधा के भव्य उद्घाटन की घोषणा की।

इस अवसर पर पद्मिनी बाग बाय इनवेंटरी के डॉ. पृथ्वीराज चौहान,इनवेंटरी के मैनेजिंग डायरेक्टर सुदीप्तो देव, आईआईएचएम की मांडवी राठौड़, इनवेंटरी के मार्वीन पीरेरा एवं सुमन मेती ने एमओयू साइन कर इस इंस्टीट्यूट की शुरूआत की। आईआईएचएस के संस्थापक डॉ. सुबोर्नो बोस ने कहा कि उदयपुर देश के सबसे प्रतिष्ठित पर्यटन स्थलों में से एक है, इसलिए हमें यहां एक केंद्र खोलना पड़ा, ताकि आसपास के छात्रों के लिए कौशल प्रशिक्षण की सुविधा मिल सके और उन्हें आतिथ्य उद्योग के लिए तैयार किया जा सके। आईआईएचएस विविध आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पाठ्यक्रमों की एक विस्तृत श्रृंखला प्रदान करता है। डॉ. पृथ्वीसिंह चौहान ने बताया कि हमारा मुख्य उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्र में रोजगार को बढ़ावा देना है। यहां पहले बैच में 30 बच्चों को प्रशिक्षित दिया जाएगा। प्रशिक्षण के दौरान रहने, खाने की व्यवस्था रहेगी।

स्पोर्ट्स इंजरी और आर्थ्रोस्कोपी कांफ्रेंस आयोजित

उदयपुर (ह. सं.)। आर्थ्रोस्कोपी एसोसिएशन द्वारा गीतांजली मेडिकल कॉलेज एंड हॉस्पिटल के सहयोग से दो दिवसीय स्पोर्ट्स इंजरी और आर्थ्रोस्कोपी कांफ्रेंस आयोजित की गई। इसमें प्रसिद्ध आर्थ्रोस्कोपी सर्जनों डॉ. दीपक जोशी, डॉ. नागराज शेट्टी, डॉ. प्रथमेश जैन, डॉ. मनित अरोड़ा के अलावा भारत के कई अन्य प्रमुख स्पोर्ट्स इंजरी और आर्थ्रोस्कोपी सर्जन शामिल हुए। एसोसिएशन के अध्यक्ष, डॉ हरप्रीत सिंह, सचिव डॉ सूर्यकांत पुरोहित और संयुक्त सचिव डॉ. सौम्य अग्रवाल ने बताया कि आधुनिक आर्थ्रोस्कोपिक सर्जरी की मदद से घायल जोड़ों को सामान्य बनाया जा सकता है और रोगी को उसकी सामान्य गतिविधियों को फिर से शुरू करने में सक्षम बनाया जा सकता है। सम्मेलन में प्रतिनिधियों ने उन्नत तकनीकों के अध्ययन पर चर्चा।

होली है दिलवालों की

- वेद व्यास -

चाहे कोई रंग उड़ाये, चाहे कोई रास रचाये।
चाहे कैसा भी गुलाल हो, होली है दिलवालों की।।
ये होली है कलमकार की, जीवित बातें लिखती है।
ये होली है सूत्रधार की, आसमान सी दिखती है।।
ये होली है चित्रकार की, धुंधले रंग नहीं भरती।
ये होली है शिल्पकार की, युग का अभिवान करती।।
ये होली है किसान भाई की, अधुनातन से डरती है।
ये होली है सैनिक वीरों की, मर कर जो जीवित रहती है।।
ये होली है मजदूरों की, जिसका गर्म पसीना है।
ये होली है उन फूलों की, जिनको जीवन जीना है।।
चाहे कोई रंग उड़ाये, चाहे कोई रास रचाये।
चाहे कैसा भी गुलाल हो, होली है दिलवालों की।।

लेखिका लक्ष्मी पुरी ने साझा किये अनुभव

उदयपुर (ह. सं.)। प्रभा खेतान फाउण्डेशन ने साहित्यिक राइट सर्कल सेशन का आयोजन किया। इसमें प्रसिद्ध लेखिका लक्ष्मी पुरी को प्रमुख वक्ता के तौर पर आमंत्रित किया गया। यह कार्यक्रम एहसास वुमन ऑफ उदयपुर की स्वाति अग्रवाल, कनिका अग्रवाल, मूमल भण्डारी, रिद्धिमा दोशी, श्रद्धा मुर्डिया और शुभ सिंघवी के सहयोग से आयोजित किया गया। श्री सीमेंट लि. ने अपनी सीएसआर इनिशिएटिव के एक भाग के रूप में इसे प्रायोजित किया गया था, वहीं रैडिसन ब्लू पैलेस रिज़ॉर्ट एण्ड स्पा, उदयपुर ने आतिथ्य भागीदार के रूप अपना सहयोग प्रदान किया।

लक्ष्मी पुरी ने लेखिका होने और डिप्लोमेसी की दुनिया से कथा साहित्य में बदलाव की अपनी प्रेरणादायक कहानी सुनाई। उन्होंने अपनी कृति 'स्वॉलोइंग द सन' पर कहा कि अपना जीवन डिप्लोमेसी में समर्पित करने के बाद, मैंने लेखन में अपनी रुचि को आगे बढ़ाया। मैं लाखों महत्वाकांक्षी लेखकों और महिलाओं को प्रेरित करना चाहती हूं और शब्दों की शक्ति के माध्यम से प्रभाव पैदा करना चाहती हूं, और इस तरह की इवेन्ट्स वास्तव में मुझे अपने लक्ष्यों के लिए कड़ी मेहनत करने के लिए प्रेरित करती हैं।

रैडिसन ब्लू पैलेस रिज़ॉर्ट एण्ड स्पा, उदयपुर की ओनर स्वाति अग्रवाल ने कहा कि साहित्य जगत मेरे दिल में एक विशेष स्थान रखता है। मैं उन समाजों और समुदायों का हिस्सा बनकर सम्मानित महसूस करती हूं जो लेखक और साहित्यिक उत्साही समुदायों की सेवा में जुटे हुए हैं।

देवेन्द्रकुमार जैन को पीएच.डी.

उदयपुर (ह. सं.)। साई तिरूपति विश्वविद्यालय के रजिस्ट्रार देवेन्द्रकुमार जैन को कानपुर के विश्वविद्यालय द्वारा पीएच.डी. की उपाधि प्रदान की गई है। जैन ने स्वास्थ्य सम्बन्धी संस्थानों में रोगी संतुष्टि में सुधार के लिए 'प्रौद्यागिकी एवं नवाचार की भूमिका की खोज-दक्षिणी राजस्थान का अध्ययन' विषय पर शोध किया। इस शोध के माध्यम से उन्होंने आज के युग में रोगी सम्बन्धी समस्याओं के निवारण हेतु प्रौद्यागिकी माध्यमों के सही इस्तेमाल पर जोर दिया।

100 छात्र-छात्राओं को बांटे जूते और चप्पल

उदयपुर (ह. सं.)। मानव-कमल कैलाश सेवा संस्थान की ओर से आर्थिक रूप से कमजोर एवं जरूरतमंद छात्र-छात्राओं को सहायता शिविर आयोजित कर जूते और चप्पल वितरित किए गए।

शिविर प्रभारी कुलदीप सिंह शेखावत ने बताया कि बढ़ती गर्मी को देखते हुए संस्थान अध्यक्ष कैलाश 'मानव' एवं कोषाध्यक्ष कमला देवी के निर्देशन में राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय चोरवड़ी एवं पीईओ अधीनस्थ राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालय, बाबरिया खेड़ा में कक्षा 1 से 5वीं तक के आर्थिक रूप से कमजोर एवं जरूरतमंद 100 से भी ज्यादा बालक-बालिकाओं को जूते -चप्पल वितरित किये गए। प्रधानाचार्य कन्हैयालाल मेनारिया एवं विद्यालय स्टॉफ ने संस्थान का आभार व्यक्त किया। इस दौरान पूर्व सरपंच प्रतिनिधी दशरथ मेनारिया, राजेन्द्र प्रसाद मेनारिया, हेमराज जाट भी मौजूद रहे। शिविर में शीतल अग्रवाल, राज कुमार मेनारिया, मोहनलाल रेबारी, ओमप्रकाश वैष्णव और भैरूलाल ने सेवाएं दी।

पुराणों से लेकर लोक के कंठों पर आसीन है नल दमयंती की कथा

- डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू' -

होलिका दहन से लेकर दस दिन तक लोककथाओं के कथन और वार्ता के श्रवण की परम्परा में हमारे सामाजिक संबंध के सूत्र और वे मूल्य जुड़े होते हैं जो भारतीय परिवारों की मूल विशेषता है। यह विशेषता सामूहिक संबद्धता का पोषण करने वाली है।

दशामाता की व्रत कथाओं में अपेक्षाकृत पुरानी नल दमयंती की कथा है जो महाभारत में लोक से लेकर लिखी गई लेकिन लोककण्ठ ने उसे सदा आदरणीय मानकर सम्मान दिया। सास ने बहू को, बहू ने अपनी बहू को और बहू ने अपनी बहू को सुनाई... याद नहीं रही तो किसी बात कहने वाली स्त्री के पास जाकर सुनी और जिसको याद है, उसने दसों ही दिन बोलकर दोहराई। कोई सुनने वाली नहीं मिली तो हथेली में अन्न के आखा लेकर अथवा जल भरे लोटे के आगे सुनाई। लेकिन, सुनाई ही!

सत्य कथन, सबका सम्मान, सहचर का निश्छल साथ, सच्चा संबंध, समभाव, सहिष्णुता, सतीत्व, साझेदारी का महत्व, सहजता और सदाचरण - ये दस मानवता के शाश्वत मूल्य हैं। मानवता के निर्धारक होने से ये मातृरूप हैं। इनका जीवन में पालन करना ही पूजन है। दशामाता की कथाओं में ये भाव अंतर्निहित हैं। इनके व्रत पालन से ही दमयंती महारानी होती है और नल महाराजा! सदा सुदशा, सुख, सौभाग्य के लिए यह जीवन मंत्र है।

(राजस्थान की लोक व्रत संस्कृति - डॉ. कविता मेहता)

नैषध परिशीलन से ज्ञात होता है कि नल- कथा अति प्राचीन काल से प्रसिद्ध रही है। रामायण एवं महाभारत में उसका उल्लेख देखकर उसकी वैदिक साहित्य में प्रसिद्धि का भी अनुमान लगाया जा सकता है। वाल्मीकि रामायण में रावण के लिए सीता को डरानेवाली राक्षसियों को सीता ने प्रत्युत्तर देते हुए कहा था- 'दीन हो या राज्यहीन हो, जो मेरा पति है वही मेरा गुरु है । उसमें मैं उसी प्रकार अनुरक्त हूँ जैसे सूर्य में सुवर्चला । भीम कुमारी दमयन्ती जैसे अपने पति नैषध (नल) में अनुरक्त थी उसी प्रकार मैं अपने पति इक्ष्वाकुवंश - शिरोमणि राम में अनुरक्त हूँ।' 'महाभारत' में तो नल कथा पूर्ण विस्तार के साथ कही गई है । 'नैषधीयचरित' का वही आधार ही है।

पुराणों में भी इसका उल्लेख हुआ है। उनमें यद्यपि महाभारत की भाँति विस्तृत रूप से वर्णित नहीं है, किन्तु उससे उसकी लोकख्याति का पता तो चल ही जाता है। मत्स्यपुराण में इक्ष्वाकु वंश वर्णन के प्रसंग में वीरसेन के पुत्र नल तथा निषध के पुत्र नल का उल्लेख किया गया है।

खंडात्मक स्कन्दपुराण में नल का दो बार उल्लेख हुआ है। एक उस समय जब वन में दमयन्ती को अकेली त्यागकर दु:खी नल घूमते हुए हाटकेश्वरक्षेत्र पहुँचे और वहाँ उन्होंने चर्ममुण्डा देवी की स्थापना की और उसी के समीप में शिवलिंग की स्थापना की जो नलेश्वर नाम से विख्यात हुए। दूसरे में केवल नलेश्वर के प्रसंग में नामोल्लेख मात्र हुआ है।

कथा विस्तार के साथ नहीं कही गयी है। पहली बार भी प्रथम स्थल में नल का पूर्वार्द्ध जीवन केवल दो श्लोकों में कह दिया गया है- 'पुराने समय में वीरसेन के पुत्र नल नाम के राजा हुए। वे सब गुणों से युक्त तथा शत्रुओं का विनाश करनेवाले थे। उनकी प्राणों से भी प्रिय भार्या दमयन्ती थी। वह विदर्भ राज की पुत्री थी।' उत्तरार्द्ध का कुछ विस्तार से वर्णन हुआ है क्योंकि वहाँ उसी से प्रयोजन था। लिंग-पुराण में सूर्यवंशीय राजा ऋतुपर्ण का वर्णन करते हुए उनके मित्र वीरसेन के पुत्र निषधाधिपति नल का उल्लेख हुआ है।

पैशाची भाषा में लिखित गुणाढ्य की बृहत्कथा में भी नलकथा कही गयी थी। हालाँकि दुर्भाग्य से बृहत्कथा का इस समय प्राप्य नहीं है, दूसरे क्षेमेन्द्र की बृहत्कथामंजरी में और सोमदेव भट्ट की कथा सरित्सागर में जो गुणाढ्य की बृहत्कथा के संस्कृत रूपान्तर हैं, नल-कथा का वर्णन हम सहज को देखकर करते हैं

स्कन्दपुराण 6वें नागरखण्ड (अध्याय 54, 55 2 व 7) और प्रभासखण्ड (अध्याय 345) में प्रसंग हैं। यथा -

वीरसेनसुत: पूर्व नलो नाम महीपति:।
आसीत्सर्वगुणोपेत: सर्वशत्रुक्षयव:।।
भार्यात्स्याभवत्साध्वी प्राणेभ्योऽपिगरियसि।
दमयन्तिति मृगमा विदर्भाधिपते: सुता।
(स्कंद पुराण खंड 6, अध्याय 54-3, 4)
पोऽयुतायुषो धीमन् ऋतुपर्णो महायशा:।
व्याक्षहृदयज्ञो वै राजा नलसखो बली।।
नालोद्वैव भगवानौ पुराणेषु दृढव्रतौ।
वीरसेनसुतश्चान्यो यश्चक्ष्वाकुकुलोद्भव:।। (66, 23-25)

इनके अतिरिक्त अन्य पुराणों में भी नल नाम का उल्लेख हुआ है। कहीं नैयध नल का, कहीं सूर्यवंशीय नल का और कहीं किसी अन्य नल का। उनमें निषेधराज नल की कथा का यद्यपि कोई संकेत नहीं किन्तु नल नाम की प्राचीनता तो सिद्ध ही हो जाती है। कूर्मपुराण में सूर्यवंशीय 'नल' का उल्लेख हुआ है—

अतिथिस्तु कुशज्जज्ञे निष्वस्तत्सुतोऽभवत्।
नलश्च निषधस्यासीत् नभास्तस्मादजायत।।

भविष्य पुराण में आशामाता के नाम से इस व्रत को दिया गया है। आशा संख्यावाची शब्द है जिसका आशय दिशा है और दिशाएं 10 होती हैं। इस तरह यह व्रत दस दिन वाला है। दस तिथि वाला है। बीच में जिस दिन रविवार पड़ जाए उस दिन दाड़ा बावजी (सूर्यदेव) के नाम व्रत रखकर एक ही रोट को दही, गुड़ घी के साथ (अलुना) खाया जाता है लेकिन उससे पहले रोट में छेदकर चुपचाप भानुदर्शन किया जाता है।

किसी मनुष्य का चेहरा नहीं देखा जाता। यह उस काल की नारी स्मृति है जब कुन्ती जैसी कन्याएं प्रकाश जैसे तत्त्व के धारक को मोहवश खोह से देखती थी लेकिन अन्नचूर्ण के रोट उसी सूर्य के आकार के बनाकर चुपके से खाना सीखी थी...।

दशा व्रत दस बिंदी वाला है। मातृकाओं को बिंदी से ही जाना जाता है। कार्तिकेय ने उनके आधार पर ही 26 (+ 1) अक्षर सीखे। इसका अन्य कोई रूप नहीं। डोरक व्रत होने से इसको हमेशा याद रखा जाता है। डोरे पर दस गांठ होती है।

व्रत में भित्ति पर दस गांठ की प्रतीक कुमकुम और काजल या मेंहदी से 10 - 10 बिंदी लगाई जाती है। पीपल का पूजन किया जाता है और परिक्रमा कर हल्दी मिले आटे के गहने निवेदित किए जाते हैं और घर के द्वार पर स्वास्तिक बनाकर एकाशन किया जाता है। यह लोकभाषा के संरक्षण का सुंदर माध्यम भी है।

मित्र नीलेश पालीवाल और धर्मेंद्र सालवी ने दशामाता के थापे और बिंदी वाले भित्तिचित्र भेजकर पूछा। वहां अनेक बरसों से ऐसे चित्रों के आगे कथा कथन, श्रवण होता है। धोयंदा, फरारा, बेडला आदि में भी कथा चौरों पर ऐसे अंकन मिलते हैं, इसमें ऊंट कहां से आ बैठे? जरूर चतुरों ने चलाए हैं! नारी की आराधना के मंगल प्रतीकों में दो नाम मुख्य हैं = हाता और माता। हाथा में हथेली के थापे, पंचांगुलिक और स्वस्तिक चिह्न होते हैं और माता का अर्थ है बिंदी, तिलक, टपली। ये अर्थ कोश में कहां, लोक में हैं।

जहां होली पर होती है दो लड़कों की आपस में शादी

गेरियों की इस खोज में भूले-भटके रास्ते में घूमता जो भी बालक पहले मिलता है, उसे ही पकड़ कर गांव के मध्य स्थित लक्ष्मीनारायण मन्दिर चौक पर पूर्व से स्थापित किये गए विवाह मण्डप पर लाया जाता है। खोज प्रक्रिया में पहले मिलने वाले बालक को वर व बाद में मिलने वाले बालक को वधू घोषित किया जाता है। नियम है कि जो भी इस प्रकार की परम्परा का विरोध करता है, उसके घर गांव के पंच ढूंढ़ की पापड़ी बनाने नहीं जायेंगे व उसके साथ गांव का पंचायती व्यवहार बंद कर दिया जायेगा।

बांसवाड़ा जिले के बड़ोदिया कस्बे में होली पर एक ऐसी शादी की परम्परा है, जिसमें दूल्हा भी लड़का होता है और दुल्हन भी लड़का। यह आश्चर्जनक परन्तु सत्य है। यह शादी वास्तविक शादी न होकर मात्र एक परम्परा का निर्वहन ही होती है। कई वर्षों से पुरखों की परम्परा के रूप में आज भी उसी सम्मान और श्रद्धाभाव से सम्पादित की जा रही इस रस्म का जीवन्त नजारा होली की पूर्व रात्रि को देखा जा सकता है।

होली के प्रहसन खेल रूप में यह परम्परा सैकड़ों साल से मनाई जा रही है। इस परम्परा के तहत चौदस की रात्रि को गांव के मुखिया के नेतृत्व में युवाओं का एक समूह जिसे स्थानीय बोली वागड़ी में 'गेरिया' कहा जाता है, ऐसे दो अविवाहित बालकों को खोजने निकलता है जिनका कि यज्ञोपवित संस्कार न हुआ हो। जन मान्यताओं के चलते ऐसा जरूरी है कि सम्मिलित बालक न तो विवाहित हो न ही यज्ञोपवितधारी हो।

रात्रि में ढोल की थाप के साथ नाचते गाते गेरियों का यह समूह शादी योग्य दो बालकों को ढूंढने के उद्देश्य से सारे गांव की सैर करता है। गेरियों की इस खोज में भूले-भटके रास्ते में घूमता जो भी बालक पहले मिलता है, उसे ही पकड़ कर गांव के मध्य स्थित लक्ष्मीनारायण मन्दिर चौक पर पूर्व से स्थापित किये गए विवाह मण्डप पर लाया जाता है। खोज प्रक्रिया में पहले मिलने वाले बालक को वर व बाद में मिलने वाले बालक को वधू घोषित किया जाता है।

शादी हेतु मण्डप स्थापित किया जाता है और पण्डित जो कि इन्हीं गेरियों में सम्मिलित एक व्यक्ति होता है, के साथ वर-वधू के साथ मण्डप में बैठाकर शादी की सम्पूर्ण रस्में अदा की जाती है। मण्डप में हवन वेदिका भी होती है और दूल्हा-दुल्हन के फेरे भी। इस दौरान उपस्थित गेरिये ढोल-तासों की संगत के साथ शादी-ब्याह के गीत गाते मौज मस्ती करते हैं।

शादी की यह रस्म अदायगी सारी रात चलती है और तडके वर-वधू बने दोनों बालकों को बैलगाड़ी में बैठाकर गांव भर में बिनौला यानी उनकी शोभायात्रा निकाली जाती है। बिनौले को देखने के लिये ग्रामीणजन भी उत्साहित दिखाई पड़ते हैं।

बिनौले की रस्म के दौरान शादी में सम्मिलित होने वाले सभी लोग बारी-बारी से वर-वधू बने बालकों के घर पहुंचते हैं व शादी की खुशी की मिठाई रूप में शक्कर अथवा नारियल की चटख का प्रसाद ग्रहण करते हैं।

मजे की बात तो यह है कि इस सम्पूर्ण प्रक्रिया में वर-वधू बने बालक भी इस क्रिया का प्रतिकार न करते हुए इस प्रहसन का आनन्द लेते हैं।

सामाजिक बंधनों में बंधे ग्रामीणजन भी समाज के नियमों के कारण इसका विरोध नहीं करते हैं। नियम है कि जो भी इस प्रकार की परम्परा का विरोध करता है, उसके घर गांव के पंच ढूंढ़ की पापड़ी बनाने नहीं जायेंगे व उसके साथ गांव का पंचायती व्यवहार बंद कर दिया जायेगा।

स्वत्वाधिकारी प्रकाशक डॉ. तुक्तक भानावत द्वारा 904, आर्ची आर्केड, राम-लक्ष्मण वाटिका के पास, न्यू भूपालपुरा उदयपुर - 313001 (राज.) से प्रकाशित एवं मुद्रक लोकेश कुमार आचार्य द्वारा मैसर्स पुकार प्रिंटिंग प्रेस 311-ए, चित्रकूट नगर, भुवाणा, उदयपुर (राज.) से मुद्रित। सम्पादक : रंजना भानावत।
फोन : 0294-2429291, मोबाइल-9414165391, Email : shabdranjanudr@gmail.com, drtuktakbhanawat@gmail.com, सर्व विवादों का न्याय क्षेत्र उदयपुर होगा।